

Chapter-4 कार्यपालिका

पाठ्य पुस्तक के प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1.

संसदीय कार्यपालिका का अर्थ होता है

(क) जहाँ संसद हो वहाँ कार्यपालिका का होना

(ख) संसद द्वारा निर्वाचित कार्यपालिका

(ग) जहाँ संसद कार्यपालिका के रूप में काम करती है।

(घ) ऐसी कार्यपालिका जो संसद के बहुमत से समर्थन पर निर्भर हो।

उत्तर-

(घ) ऐसी कार्यपालिका जो संसद के बहुमत से समर्थन पर निर्भर हो।

प्रश्न 2.

निम्नलिखित संवाद पढ़ें। आप किस तर्क से सहमत हैं और क्यों?

अमित – संविधान के प्रावधानों को देखने से लगता है कि राष्ट्रपति का काम सिर्फ ठप्पा मारना

शमा – राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। इस कारण उसे प्रधानमंत्री को हटाने का भी अधिकार होना चाहिए।

राजेश – हमें राष्ट्रपति की जरूरत नहीं। चुनाव के बाद, संसद बैठक बुलाकर एक नेता चुन सकती है जो प्रधानमंत्री बने।

उत्तर-

हम शमा के तर्क से कुछ सीमा तक सहमत हो सकते हैं। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है; अतः उसे प्रधानमंत्री को हटाने का अधिकार भी होना चाहिए। सिद्धान्त रूप से ऐसा है कि राष्ट्रपति ही प्रधानमंत्री की औपचारिक रूप से नियुक्ति करता है व संविधान के अनुच्छेद 78 के अनुरूप प्रधानमंत्री अपना कार्य न करे व राष्ट्रपति को माँगी गई सूचना न दे तो वह प्रधानमंत्री को हटा भी सकता है।

प्रश्न 3.

निम्नलिखित को सुमेलित करें-

(क) भारतीय विदेश सेवा – जिसमें बहाली हो उसी प्रदेश में काम करती है।

(ख) प्रादेशिक लोक सेवा – केंद्रीय सरकार के दफ्तरों में काम करती है जो या तो देश की राजधानी में होते हैं या देश में कहीं और।

(ग) अखिल भारतीय सेवाएँ – जिस प्रदेश में भेजा जाए उसमें काम करती है, इसमें प्रतिनियुक्ति पर केंद्र में भी भेजा जा सकता है।

(घ) केंद्रीय सेवाएँ – भारत के लिए विदेशों में कार्यरत।

उत्तर-

सुमेलित –

(क) भारतीय विदेश सेवा भारत के लिए विदेशों में कार्यरत।

(ख) प्रादेशिक लोक सेवा जिसमें बहाली हो उसी प्रदेश में काम करती है।

(ग) अखिल भारतीय सेवाएँ – जिस प्रदेश में भेजा जाए उसमें काम करती है, इसमें प्रतिनियुक्ति पर केंद्र में भी भेजा जा सकता है।

(घ) केंद्रीय सेवाएँ – केंद्रीय सरकार के दफ्तरों में काम करती है जो या तो देश की राजधानी में होते हैं या देश में कहीं और।

प्रश्न 4.

उस मंत्रालय की पहचान करें जिसने निम्नलिखित समाचार को जारी किया होगा। यह मंत्रालय प्रदेश की सरकार का है या केंद्र सरकार का और क्यों?

(क) आधिकारिक तौर पर कहा गया है कि सन् 2004-05 में तमिलनाडु पाठ्यपुस्तक निगम कक्षा 7, 10 और 11 की नई पुस्तकें जारी करेगा।

(ख) भीड़ भरे तिरुवल्लुर-चेन्नई खंड में लौह-अयस्क निर्यातकों की सुविधा के लिए एक नई रेल लूप लाइन बिछाई जाएगी। नई लाइन 80 किमी की होगी। यह लाइन पुदुर से शुरू होगी और बंदरगाह के निकट अतिपट्ट तक जाएगी।

(ग) रमयमपेट मंडल में किसानों की आत्महत्या की घटनाओं की पुष्टि के लिए गठित तीन सदस्यीय उप-विभागीय समिति ने पाया कि इस माह आत्महत्या करने वाले दो किसान फसल के मारे जाने से आर्थिक समस्याओं का सामना कर रहे थे।

उत्तर-

(क) यह समाचार तमिलनाडु सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने जारी किया होगा। क्योंकि राज्य शिक्षा मंत्रालय ही कक्षा 7, 10 व 11 की शिक्षा के विषयों से संबद्ध है।

(ख) यह समाचार केन्द्र सरकार के रेलवे मंत्रालय ने जारी किया होगा जो केन्द्र का विषय है; अतः यह केन्द्र सरकार के अधीन है। यह विषय निर्यात से भी जुड़ा है, यह भी केन्द्र को ही विषय है।

(ग) यह समाचार प्रदेश के कृषि मंत्रालय ने जारी किया होगा। किसानों का विषय राज्य सरकार का है।

प्रश्न 5.

प्रधानमंत्री की नियुक्ति करने में राष्ट्रपति-

(क) लोकसभा के सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।

(ख) लोकसभा में बहुमत अर्जित करने वाले गठबन्धन-दलों के सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।

(ग) राज्यसभा के सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।

(घ) गठबन्धन अथवा उस दल के नेता को चुनता है जिसे लोकसभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो।

उत्तर-

(घ) गठबंधन अथवा उस दल के नेता को चुनता है जिसे लोकसभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो।

प्रश्न 6.

इस चर्चा को पढ़कर बताएँ कि कौन-सा कथन भारत पर सबसे ज्यादा लागू होता है?

आलोक – प्रधानमंत्री राजा के समान है। वह हमारे देश में हर बात का फैसला करता है।

शेखर – प्रधानमंत्री सिर्फ 'बराबरी के सदस्यों में प्रथम' है। उसे कोई विशेष अधिकार प्राप्त नहीं। सभी मंत्रियों और प्रधानमंत्री के अधिकार बराबर हैं।

बॉबी – प्रधानमंत्री को दल के सदस्यों तथा सरकार को समर्थन देने वाले सदस्यों का ध्यान रखना पड़ता है। लेकिन कुल मिलाकर देखें तो नीति-निर्माण तथा मंत्रियों के चयन में प्रधानमंत्री की बहुत ज्यादा चलती है।

उत्तर-

उपर्युक्त परिस्थितियों में बॉबी का कथन भारतीय परिप्रेक्ष्य में प्रधानमंत्री की स्थिति को प्रकट करता है। प्रधानमंत्री की शक्तियाँ निश्चित ही अधिक हैं लेकिन उसे सरकार को समर्थन देने वाले सदस्यों का भी ध्यान रखना पड़ता है।

प्रश्न 7.

क्या मंत्रिमण्डल की सलाह राष्ट्रपति को हर हाल में माननी पड़ती है? आप क्या सोचते हैं? अपना उत्तर अधिकतम 100 शब्दों में लिखें।

उत्तर-

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 74 में उल्लेख है कि राष्ट्रपति को उसके कार्यों में सलाह देने के लिए प्रधानमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिमण्डल होगा जो उनकी सलाह के अनुसार कार्य करेगा। 42वें संविधान संशोधन के अनुसार यह निश्चित किया गया था कि राष्ट्रपति को मंत्रिमण्डल की सलाह अनिवार्य रूप से माननी होगी। परन्तु संविधान के 44वें संविधान संशोधन में फिर यह निश्चय किया कि राष्ट्रपति प्रथम बार में मंत्रिमण्डल की सलाह मानने के लिए बाध्य नहीं है। वह सलाह को पुनः विचार-विमर्श हेतु भेज सकता है परन्तु दुबारा विचार-विमर्श के पश्चात् दी गई 'सलाह' को उसे अनिवार्य रूप से मानना होगा।

प्रश्न 8.

कार्यपालिका की संसदीय-व्यवस्था ने कार्यपालिका को नियन्त्रण में रखने के लिए विधायिका को बहुत-से अधिकार दिए हैं। कार्यपालिका को नियन्त्रित करना इतना जरूरी क्यों है? आप क्या सोचते हैं?

उत्तर-

संसदीय सरकार की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें कार्यपालिका (प्रधानमंत्री व मंत्रिमण्डल) संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। विभिन्न संसदात्मक तरीकों से व्यवस्थापिका कार्यपालिका पर लगातार अपना नियन्त्रण बनाए रखती है। इससे कार्यपालिका की मनमानी पर रोक

लगती है और जनहित के निर्णय लिए जा सकते हैं। व्यवस्थापिका जनमत-निर्माण से, 'काम रोको' प्रस्ताव से व सरकार के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाकर सरकार पर नियन्त्रण करती है। जो स्वच्छ प्रशासन व जनहित के लिए आवश्यक भी है।

प्रश्न 9.

कहा जाता है कि प्रशासनिक-तन्त्र के कामकाज में बहुत ज्यादा राजनीतिक हस्तक्षेप होता है। सुझाव के तौर पर कहा जाता है कि ज्यादा-से-ज्यादा स्वायत्त एजेंसियाँ बननी चाहिए जिन्हें मंत्रियों को जवाब न देना पड़े।

(क) क्या आप मानते हैं कि इससे प्रशासन ज्यादा जन-हितैषी होगा?

(ख) क्या आप मानते हैं कि इससे प्रशासन की कार्यकुशलता बढ़ेगी?

(ग) क्या लोकतंत्र का अर्थ यह होता है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशासन पर पूर्ण नियन्त्रण हो?

उत्तर-

भारत में कार्यपालिका के दो प्रकार दिखाई देते हैं- एक राजनीतिक कार्यपालिका जो अस्थायी होती है। इसमें मंत्रियों के रूप में जन-प्रतिनिधि शामिल होते हैं। दूसरी स्थायी कार्यपालिका होती है। इसमें नौकरशाह (सरकारी कर्मचारी) होते हैं। ये अपने क्षेत्र में अनुभवी व विशेषज्ञ होते हैं। स्थायी नौकरशाही एक निश्चित राजनीतिक-प्रशासनिक वातावरण में कार्य करती है। इसमें राजनीतिक हस्तक्षेप अधिक होता है। यह नौकरशाही की क्षमता को भी प्रभावित करती है। संसदात्मक कार्यपालिका में यह सम्भव नहीं है कि प्रशासनिक संस्थाएँ पूरी तरह से स्वायत्त हों व उनमें राजनीतिक हस्तक्षेप का कोई प्रभाव न हो। यह निश्चित है कि अनावश्यक राजनीतिक हस्तक्षेप अगर न हो तो प्रशासनिक संस्थाओं की क्षमता अवश्य बढ़ेगी।

प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र में जन-प्रतिनिधि जनता के हितों के रक्षक माने जाते हैं तथा प्रशासनिक कर्मचारियों व प्रशासनिक अधिकारियों का यह दायित्व है कि जन-प्रतिनिधियों के निर्देशन में जनहित को दृष्टिगत रखते हुए नीति-निर्माण करें। अतः आवश्यक सलाह को हस्तक्षेप नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि यह तो संसदात्मक सरकार के ढाँचे की अनिवार्यता है। जनहित के लिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक कार्यपालिका व स्थायी नौकरशाही तालमेल बिठाकर अपने-अपने क्षेत्रों में रहकर कार्य करें।

प्रश्न 10.

नियुक्ति आधारित प्रशासन की जगह निर्वाचन आधारित प्रशासन होना चाहिए। इस विषय पर 200 शब्दों में एक लेख लिखें।

उत्तर-

निर्वाचित प्रशासन का अर्थ

विश्व के लगभग सभी देशों में प्रशासन स्थायी कर्मचारियों द्वारा चलाया जाता है जो योग्यता तथा खुली

प्रतियोगिता के आधार पर नियुक्त किए जाते हैं। ये कर्मचारी या अधिकारी स्थायी रूप से पद पर बने रहते हैं और उन्हें पद प्राप्त करने के लिए चुनाव नहीं लड़ना पड़ता, इसीलिए उन्हें स्थायी कार्यपालिका कहा जाता है। ये नियुक्ति आधारित प्रशासन का गठन करते हैं। यदि प्रशासन के सभी पदों पर नियुक्ति हेतु निर्वाचन की व्यवस्था कर दी जाए और कर्मचारी को प्रत्येक चार-पाँच वर्ष बाद चुनाव लड़ना पड़े और यह भी आवश्यक नहीं कि वह पुनः इस पद पर चुना जाए तो इसे निर्वाचित प्रशासन कहा जाएगा।

नियुक्त प्रशासन ही उचित तथा लाभदायक है- नियुक्त प्रशासन के स्थान पर निर्वाचित प्रशासन अच्छा तथा लाभदायक नहीं हो सकता, नियुक्त प्रशासन ही उचित होता है। इसके पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए जा सकते हैं-

1. प्रशासन एक कला है जिसके लिए विशेष योग्यता तथा जानकारी की आवश्यकता होती है और स्थायी रूप से एक ही प्रकार का कार्य करने से व्यक्ति में अनुभव व निपुणता आती है। यह योग्यता निर्वाचित व्यक्तियों को प्राप्त नहीं होती।
2. स्थायी कर्मचारी राजनीति में भाग न लेकर राजनीतिक कार्यपालिका के निर्देशानुसार शासन चलाते हैं, किसी राजनीतिक विचारधारा से प्रेरित होकर कार्य नहीं करते। निर्वाचित स्थिति प्राप्त करने पर वे राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेंगे और प्रशासनिक कार्य राजनीतिक भेदभाव के आधार पर करेंगे।
3. यदि निर्वाचित कर्मचारी तथा राजनीतिक कार्यपालिका के बीच राजनीतिक विचारधारा के आधार पर विरोध हो तो कर्मचारी मंत्री के आदेशों का पालन न करके खुले रूप में उनका विरोध करेगा, मंत्री के आदेश का पालन नहीं करेगा और प्रशासन में गतिरोध उत्पन्न हो जाएगा।
4. निर्वाचित कर्मचारी प्रशासन के काम में रुचि न लेकर अगले चुनाव में विजय प्राप्त करने की जोड़-तोड़ में लग जाएँगे क्योंकि उनका भविष्य अगले चुनाव पर निर्भर करेगा। इसके विपरीत नियुक्त कर्मचारी को उस पद पर स्थायी तौर पर रहना है और उसकी पदोन्नति अच्छे कार्यों पर निर्भर करेगी।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रश्न 1.

संघीय मंत्रि-परिषद् के सदस्य सामूहिक रूप से किसके प्रति उत्तरदायी है।

(क) राज्यसभा

(ख) लोकसभा

(ग) लोकसभा व राज्यसभा दोनों

(घ) लोकसभा, राज्यसभा तथा राष्ट्रपति

उत्तर :

(ख) लोकसभा।

प्रश्न 2.

मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल कितना है?

- (क) पाँच वर्ष
- (ख) चार वर्ष
- (ग) अनिश्चित
- (घ) दो वर्ष

उत्तर :

(ग) अनिश्चित।

प्रश्न 3.

प्रधानमंत्री किसके प्रति उत्तरदायी हैं?

- (क) राष्ट्रपति
- (ख) लोकसभा
- (ग) राज्यसभा
- (घ) उच्चतम न्यायालय

उत्तर :

(ख) लोकसभा।

प्रश्न 4.

भारत में केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल है –

- (क) 5 वर्ष
- (ख) 4 वर्ष
- (ग) अनिश्चित
- (घ) 2 वर्ष

उत्तर :

(क) 5 वर्ष।

प्रश्न 5.

मंत्रिपरिषद् का अध्यक्ष होता है –

- (क) राष्ट्रपति
- (ख) प्रधानमंत्री
- (ग) उपराष्ट्रपति
- (घ) लोकसभा अध्यक्ष

उत्तर :

(ख) प्रधानमंत्री।

प्रश्न 6.

भारत में किस प्रकार की कार्यपालिका है।

- (क) संसदीय
- (ख) अध्यक्षात्मक
- (ग) अर्द्ध-अध्यक्षात्मक
- (घ) राजतन्त्रात्मक

उत्तर :

(क) संसदीय।

प्रश्न 7.

जर्मनी में सरकार का प्रधान कौन होता है?

- (क) राष्ट्रपति
- (ख) प्रधानमंत्री
- (ग) चांसलर
- (घ) उपराष्ट्रपति

उत्तर :

(ग) चांसलर।

प्रश्न 8.

निम्नलिखित में से कौन भारत के राष्ट्रपति का चुनाव करता है?

- (क) लोकसभा के सदस्य
- (ख) लोकसभा एवं राज्यसभा के सदस्य
- (ग) लोकसभा एवं विधानसभा के सदस्य
- (घ) लोकसभा, राज्यसभा एवं विधानसभा के निर्वाचित सदस्य

उत्तर :

(घ) लोकसभा, राज्यसभा एवं विधानसभा के निर्वाचित सदस्य।

प्रश्न 9.

राष्ट्रपति द्वारा राज्यसभा के कितने सदस्यों को मनोनीत किया जाता है?

- (क) 14
- (ख) 2
- (ग) 15
- (घ) 12

उत्तर :

(घ) 12

प्रश्न 10.

राष्ट्रपति शासन की अवधि कितनी होती है?

- (क) छः माह
- (ख) एक वर्ष
- (ग) दो वर्ष
- (घ) निश्चित नहीं

उत्तर :

(क) छः माह।

प्रश्न 11.

भारतीय सैन्य बल का प्रधान कौन होता है?

- (क) प्रधानमंत्री
- (ख) थल सेना का अध्यक्ष
- (ग) राष्ट्रपति
- (घ) उपराष्ट्रपति

उत्तर :

(ग) राष्ट्रपति।

प्रश्न 12.

राज्यसभा का सभापति कौन होता है?

- (क) राष्ट्रपति
- (ख) उपराष्ट्रपति
- (ग) प्रधानमंत्री
- (घ) स्पीकर

उत्तर :

(ख) उपराष्ट्रपति।

प्रश्न 13.

राष्ट्रपति को महाभियोग की प्रक्रिया द्वारा कौन हटा सकता है?

- (क) संसद
- (ख) मंत्रिपरिषद्
- (ग) उपराष्ट्रपति
- (घ) लोकसभा

उत्तर :

(क) संसद।

प्रश्न 14.

मंत्रिपरिषद् की सदस्य संख्या

(क) संविधान में संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा निर्धारित की गई है।

(ख) प्रधानमंत्री निर्धारित करता है।

(ग) लोकसभा अध्यक्ष निर्धारित करता है।

(घ) राष्ट्रपति निर्धारित करता है।

उत्तर :

(क) संविधान में संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा निर्धारित की गई है।

प्रश्न 15.

विदेश नीति का मुख्य निर्माता कौन होता है?

(क) विदेशमंत्री

(ख) राष्ट्रपति

(ग) प्रधानमंत्री

(घ) राजदूत

उत्तर :

(ग) प्रधानमंत्री।

प्रश्न 16.

संसदीय शासन में वास्तविक शक्ति निहित होती है –

(क) राष्ट्रपति एवं संसद में

(ख) संसद एवं प्रधानमंत्री में

(ग) मंत्रिपरिषद् एवं प्रधानमंत्री में

(घ) राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री में।

उत्तर :

(ग) मंत्रिपरिषद् एवं प्रधानमंत्री में।

प्रश्न 17.

भारतीय कार्यपालिका का 'पॉकेट वीटो' किसके पास होता है?

(क) प्रधानमंत्री

(ख) राष्ट्रपति

(ग) उपराष्ट्रपति

(घ) उपप्रधानमंत्री

उत्तर :

(ख) राष्ट्रपति।

प्रश्न 18.

सरकार के स्थायी कर्मचारी किस सेवा के अन्तर्गत आते हैं?

- (क) विधानसभा
- (ख) नागरिक सेवा
- (ग) संसदीय स्टाफ
- (घ) प्रशासनिक स्टाफ

उत्तर :

(ख) नागरिक सेवा।

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.

कार्यपालिका से आप क्या समझते हैं?

उत्तर :

कार्यपालिका सरकार का वह अंग है जो विधायिका द्वारा स्वीकृत नीतियों और कानूनों को लागू करने के लिए जिम्मेदार है।

प्रश्न 2.

कार्यपालिका के दो प्रमुख कार्य बताइए।

उत्तर :

1. कार्यपालिका व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानूनों को कार्यान्वित करती है तथा
2. विदेश नीति का संचालन करती है।

प्रश्न 3.

कार्यपालिका की नियुक्ति की दो विधियाँ बताइए।

उत्तर :

1. निर्वाचन पद्धति तथा
2. वंशानुगत पद्धति।

प्रश्न 4.

किन देशों में व्यवस्थापिका के दोनों सदनों द्वारा कार्यपालिका के अध्यक्ष या समिति का चुनाव होता है?

उत्तर :

स्विट्जरलैण्ड, यूगोस्लाविया और तुर्की। प्रश्न 5. किन देशों में कार्यपालिका के अध्यक्ष का निर्वाचन

प्रत्यक्ष रूप से मतदाताओं के मतों द्वारा होता है? उत्तर-फ्रांस, ब्राजील, चिली, पेरू, मैक्सिको, घाना आदि।

प्रश्न 6.

कार्यपालिका को एक न्यायिक कार्य बताइए।

उत्तर :

प्रशासनिक विभाग द्वारा अर्थदण्ड देना, कार्यपालिका का एक न्यायिक कार्य है।

प्रश्न 7.

नाममात्र की कार्यपालिका का एक उदाहरण दीजिए।

उत्तर :

भारत का राष्ट्रपति व ब्रिटेन की सम्राज्ञी नाममात्र की कार्यपालिका के उदाहरण हैं।

प्रश्न 8.

बहुल कार्यपालिका का एक लक्षण बताइए।

उत्तर :

इस व्यवस्था में कार्यकारिणी सम्बन्धी शक्तियाँ एक व्यक्ति के हाथों में निहित न होकर अनेक व्यक्तियों की एक परिषद् अथवा अनेक अधिकारियों के समूह में निहित होती हैं।

प्रश्न 9.

कार्यपालिका के किन्हीं दो रूपों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

1. एकल कार्यपालिका तथा
2. बहुल कार्यपालिका।

प्रश्न 10.

भारत में कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान कौन है?

उत्तर :

भारत में कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान राष्ट्रपति होता है।

प्रश्न 11.

राजनीतिक कार्यपालिका किसे कहते हैं?

उत्तर :

सरकार के प्रधान और उनके मंत्रियों को राजनीतिक कार्यपालिका कहते हैं।

प्रश्न 12.

स्थायी कार्यपालिका किसे कहते हैं?

उत्तर :

जो लोग प्रतिदिन के प्रशासन के लिए उत्तरदायी होते हैं, वे स्थायी कार्यपालिका कहलाते हैं।

प्रश्न 13.

अमेरिका में किस प्रकार की कार्यपालिका है?

उत्तर :

अमेरिका में अध्यक्षात्मक व्यवस्था है। कार्यकारी शक्तियाँ राष्ट्रपति के पास हैं।

प्रश्न 14.

संसदीय व्यवस्था में सरकार का प्रधान कौन होता है?

उत्तर :

संसदीय व्यवस्था में सरकार का प्रधान प्रधानमंत्री होता है।

प्रश्न 15.

भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन किस प्रकार होता है?

उत्तर :

भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निर्वाचक-मण्डल द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अन्तर्गत एकल संक्रमणीय पद्धति के आधार पर होता है।

प्रश्न 16.

भारत के राष्ट्रपति का कार्यकाल कितने वर्ष का है?

उत्तर :

भारत के राष्ट्रपति का कार्यकाल 5 वर्ष का है।

प्रश्न 17.

राष्ट्रपति राज्यसभा में कितने सदस्यों को मनोनीत करता है?

उत्तर :

राष्ट्रपति राज्यसभा में 12 सदस्यों को मनोनीत करता है।

प्रश्न 18.

राष्ट्रपति को उसके पद से किस प्रकार हटाया जा सकता है?

उत्तर :

महाभियोग प्रस्ताव पारित करके ही राष्ट्रपति को उसके पद से हटाया जा सकता है।

प्रश्न 19.

भारत का प्रथम नागरिक कौन है?

उत्तर :

भारत का प्रथम नागरिक राष्ट्रपति है।

प्रश्न 20.

राष्ट्रपति के निर्वाचक-मण्डल में कौन-कौन सदस्य होते हैं।

उत्तर :

राष्ट्रपति के निर्वाचक-मण्डल में निम्नलिखित सदस्य होते हैं –

1. संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य
2. सभी राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य।

प्रश्न 21.

भारत के राष्ट्रपति पद पर कोई व्यक्ति कितनी बार निर्वाचित हो सकता है?

उत्तर :

भारत के राष्ट्रपति पद पर कोई व्यक्ति अनेक बार निर्वाचित हो सकता है।

प्रश्न 22.

संविधान में उल्लिखित विधि के समक्ष समता से भारत में कौन व्यक्ति उन्मुक्त है?

उत्तर :

भारत का राष्ट्रपति उन्मुक्त है।

प्रश्न 23.

किसी एक परिस्थिति का उल्लेख कीजिए, जिसके अन्तर्गत राष्ट्रपति संकटकाल की घोषणा कर सकता है।

उत्तर :

यदि देश पर युद्ध या बाहरी शक्ति का आक्रमण हो जाए या सशस्त्र विद्रोह की अवस्था विद्यमान हो जाए तो उस परिस्थिति में राष्ट्रपति संकटकाल की घोषणा कर सकता है।

प्रश्न 24.

भारत में मंत्रिपरिषद् का प्रधान कौन होता है।

उत्तर :

भारत में मंत्रिपरिषद् का प्रधान प्रधानमंत्री होता है।

प्रश्न 25.

मंत्रिपरिषद् किसके प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है?

उत्तर :

मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है।

प्रश्न 26.

भारतीय नौकरशाही में कौन-कौन सम्मिलित हैं?

उत्तर :

भारतीय नौकरशाही में अखिल भारतीय सेवाएँ, प्रान्तीय सेवाएँ, स्थानीय सरकार के कर्मचारी और लोक उपक्रमों के तकनीकी तथा प्रबन्धकीय अधिकारी सम्मिलित हैं।

प्रश्न 27.

केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की अध्यक्षता कौन करता है?

उत्तर :

केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की अध्यक्षता प्रधानमंत्री करता है।

प्रश्न 28.

संविधान के अनुसार मंत्रिपरिषद् का क्या कार्य है?

उत्तर :

संविधान के अनुच्छेद 74 के अनुसार मंत्रिपरिषद् का मुख्य कार्य राष्ट्रपति को सहायता व सलाह देना है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.

कार्यपालिका की शक्तियों में वृद्धि के चार कारण दीजिए।

या

आधुनिक लोकतंत्र में कार्यपालिका के बढ़ते हुए प्रभाव के चार कारण लिखिए।

उत्तर :

कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं –

1. साधारण योग्यता के व्यक्तियों का चुनाव – व्यवस्थापिका के सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर चुने जाते हैं और अधिक योग्यता वाले व्यक्ति चुनाव के पचड़े में पड़ना नहीं चाहते। अतः बहुत कम योग्यता वाले व्यक्ति और पेशेवर राजनीतिज्ञ व्यवस्थापिका में चुनकर आ जाते हैं। ये कम योग्य व्यक्ति अपने कार्यों व आचरण से व्यवस्थापिका की गरिमा को कम करते हैं।

2. जनकल्याणकारी राज्य की धारणा – वर्तमान समय में जनकल्याणकारी राज्य की धारणा के कारण राज्य के कार्य बहुत अधिक बढ़ गये हैं और इन बढ़े हुए कार्यों को कार्यपालिका द्वारा ही किया जा सकता है। अतः व्यवस्थापिका की शक्तियों में निरन्तर कमी और कार्यपालिका की शक्तियों में वृद्धि होती जा रही है।

3. दलीय पद्धति – दलीय पद्धति के विकास ने भी व्यवस्थापिका की शक्ति में कमी और कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि कर दी है। संसदात्मक लोकतंत्र में बहुमत दल के समर्थन पर टिकी हुई कार्यपालिका बहुत अधिक शक्तियाँ प्राप्त कर लेती है।

4. प्रदत्त व्यवस्थापन – वर्तमान समय में कानून निर्माण का कार्य बहुत अधिक बढ़ जाने और इस कार्य के जटिल हो जाने के कारण व्यवस्थापिका के द्वारा अपनी ही इच्छा से कानून निर्माण की शक्ति

कार्यपालिका के विभिन्न विभागों को सौंप दी जाती है। इसे ही प्रदत्त व्यवस्थापन कहते हैं। और इसके कारण व्यवस्थापिका की शक्तियों में कमी तथा कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि हो गयी है।

प्रश्न 2.

कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर :

कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार

कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार निम्नलिखित हैं –

- 1. नाममात्र की कार्यपालिका** – वह व्यक्ति जो सैद्धान्तिक रूप से शासन का प्रधान है तथा जिसके नाम से शासन के समस्त कार्य किए जाते हैं एवं स्वयं किसी भी अधिकार का प्रयोग नहीं करता, नाममात्र का कार्यपालक प्रधान होता है और इस प्रकार की कार्यपालिका नाममात्र की कार्यपालिका होती है।
उदाहरणार्थ, इंग्लैण्ड का सम्राट तथा भारत का राष्ट्रपति नाममात्र की कार्यपालिका हैं। नाममात्र की कार्यपालिका के अधिकारों के प्रयोग मंत्रिपरिषद् करती है तथा वास्तविक कार्यकारिणी की शक्तियाँ मंत्रिपरिषद् में निहित होती हैं।
- 2. वास्तविक कार्यपालिका** – वास्तविक कार्यपालिका उसे कहते हैं, जो वास्तव में कार्यकारिणी की शक्तियों का प्रयोग करती है। इंग्लैण्ड, फ्रांस तथा भारत की मंत्रिपरिषद् वास्तविक कार्यपालिका का उदाहरण हैं।
- 3. एकल कार्यपालिका** – एकल कार्यपालिका उसे कहते हैं, जिसमें कार्यपालिका की सम्पूर्ण शक्तियाँ एक व्यक्ति के अधिकार में होती हैं। अमेरिका का राष्ट्रपति एकल कार्यपालिका का ही उदाहरण है।
- 4. बहुल कार्यपालिका** – इस प्रकार की कार्यपालिका में कार्यकारिणी शक्ति किसी एक व्यक्ति में निहित न होकर अनेक अधिकारियों के समूह में निहित होती है। इस प्रकार की कार्यपालिका स्विट्जरलैण्ड में है। वहाँ कार्यपालिका-सत्ता सात सदस्यों की एक परिषद् में निहित होती है।

प्रश्न 3.

वर्तमान में कार्यपालिका की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्रचलित विभिन्न पद्धतियों को उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

कार्यपालिका की नियुक्ति से सम्बन्धित विभिन्न पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं –

1. वंशानुगत पद्धति (ग्रेट ब्रिटेन-राजा)
2. जनता द्वारा अप्रत्यक्ष निर्वाचन जो वर्तमान में राजनीतिक दलों के कारण प्रत्यक्ष हो गया है। (संयुक्त राज्य अमेरिका-राष्ट्रपति)।
3. जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन (फ्रांस-राष्ट्रपति)।
4. व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचन (स्विट्जरलैण्ड-बहुल कार्यपालिका)।

5. ब्रिटेन के राजा द्वारा राष्ट्रमण्डलीय देशों के कार्यपालिका प्रमुख का मनोनयन (जैसे-कनाडा का गवर्नर जनरल)।

प्रश्न 4.

कार्यपालिका के प्रधान के चयन की विधियाँ बताइए।

उत्तर :

कार्यपालिका के प्रधान के चयन की विधियाँ निम्नलिखित हैं –

1. **वंशानुगत कार्यपालिका** – यह पद्धति इंग्लैण्ड, जापान तथा बेल्जियम आदि देशों में है। इन देशों में राजतन्त्र अभी तक जीवित है। राजा को पद वंशानुगत होता है तथा उसका ज्येष्ठ पुत्र शासन का उत्तराधिकारी होता है।
2. **जनता द्वारा निर्वाचन** – यह पद्धति चिली, घाना तथा दक्षिण अमेरिका के राज्यों में है। यहाँ जनता राष्ट्रपति का प्रत्यक्ष निर्वाचन करती है।
3. **अप्रत्यक्ष निर्वाचन** – यह पद्धति संयुक्त राज्य अमेरिका, अर्जेंटीना तथा स्पेन में है। इसमें जनता निर्वाचक मण्डल चुनती है और निर्वाचक मण्डल सर्वोच्च कार्यपालिका का चुनाव करता
4. **व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचन** – स्विट्जरलैण्ड तथा भारत में यही पद्धति है। इसमें संघ और राज्यों की व्यवस्थापिकाएँ मिलकर राष्ट्रपति या संघीय कार्यकारिणी परिषद् का निर्वाचन करती।
5. **मनोनयन** – कार्यपालिका को मनोनयन भी होता है। स्वतंत्रता से पूर्व भारत में गवर्नर जनरल तथा गवर्नरों की नियुक्ति इंग्लैण्ड के सम्राट द्वारा होती थी। कनाडा तथा ऑस्ट्रेलिया में वर्तमान में भी गवर्नर जनरल का पद विद्यमान है।

प्रश्न 5.

व्यवस्थापिका किन दो तरीकों से कार्यपालिका पर नियन्त्रण स्थापित करती है?

उत्तर :

सैद्धान्तिक दृष्टि से व्यवस्थापिका सर्वोच्च है और कार्यपालिका उसके अधीन होती है। संसदीय शासन में कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी है तथा अध्यक्षतात्मक प्रणाली में वह पृथक् रहकर व्यवस्थापिका के कानूनों को लागू करती है। परन्तु आधुनिक युग में कार्यपालिका के अधिकारों में निरन्तर वृद्धि हो रही है और आज वह विश्व के अनेक देशों में व्यवस्थापिका पर हावी होती जा रही है। इंग्लैण्ड में तो कहा जाता है कि आज मंत्रिमण्डल पर जो नियन्त्रण करती है वह संसद नहीं वरन् मंत्रिमण्डल है। रैम्जे म्योर जैसे लेखक कैबिनेट की तानाशाही की शिकायत करते हैं। उन्हीं के शब्दों में, “मंत्रिमण्डल की तानाशाही ने संसद की शक्ति तथा सम्मान को बहुत कम कर दिया है।”

प्रश्न 6.

राष्ट्रपति की पदच्युति (महाभियोग) पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर :

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 61 में यह प्रावधान किया गया है कि संविधान का अतिक्रमण करने पर

राष्ट्रपति को 5 वर्ष के निर्धारित कार्यकाल से पूर्व भी 'महाभियोग' की प्रणाली द्वारा पदच्युत किया जा सकता है। महाभियोग द्वारा हटाये जाने की प्रणाली निम्नलिखित है –

- (1) संसद के किसी भी एक सदन (उच्च एवं निम्न) के कम-से-कम एक-चौथाई सदस्य उक्त आशय के प्रस्ताव की लिखित सूचना देने के 14 दिन पश्चात् राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाने का प्रस्ताव करेंगे।
- (2) उक्त महाभियोग प्रस्ताव सम्बन्धित सदन के दो-तिहाई बहुमत से पारित होना चाहिए, तभी वह आगे जाँच के लिए दूसरे सदन में भेजा जाएगा।
- (3) दूसरा सदन जब आगामी जाँच-पड़ताल करेगा तो राष्ट्रपति स्वयं वहाँ स्पष्टीकरण देने के लिए उपस्थित हो सकता है, अथवा इस कार्य हेतु वह अपने किसी प्रतिनिधि को भेज सकता है।
- (4) यदि दूसरा सदन भी जाँच-पड़ताल के पश्चात् कुल सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से उक्त महाभियोग के प्रस्ताव को पारित कर देता है तो उसी दिन से राष्ट्रपति का पद रिक्त समझा जाएगा।

प्रश्न 7.

संघीय मंत्रिपरिषद् के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर :

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 74 के अनुसार, “राष्ट्रपति को उसके कार्यों के सम्पादन में सहायता एवं परामर्श देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी, जिसका प्रधान, प्रधानमंत्री होगा।” इस प्रकार संविधान की दृष्टि से राष्ट्रपति राज्य को प्रमुख है, परन्तु वास्तविक कार्यपालिका मंत्रिपरिषद् है। भारतीय संविधान ने देश में संसदात्मक शासन व्यवस्था की स्थापना की है संसदात्मक शासन का सबसे महत्वपूर्ण एवं प्रमुख अंग मंत्रिपरिषद् ही है। संसदात्मक शासन व्यवस्था में मंत्रिपरिषद् शासन का आधार-स्तम्भ होता है। बेजहॉट ने मंत्रिपरिषद् को कार्यपालिका तथा विधायिका को जोड़ने वाला कब्जा कहा है। यद्यपि वैधानिक रूप से संघ की कार्यपालिका का सर्वेसर्वा राष्ट्रपति होता है, किन्तु वास्तविक शक्ति मंत्रिपरिषद् में केन्द्रित होती है। इसलिए मंत्रिपरिषद् का अधिक महत्वपूर्ण होना स्वाभाविक ही है।

प्रश्न 8.

मंत्रिपरिषद् में कार्यरत मंत्रियों की विभिन्न श्रेणियों की विवेचना कीजिए।

या

मंत्रिपरिषद् में सम्मिलित मंत्रियों की कौन-कौन सी श्रेणियाँ होती हैं?

उत्तर :

मंत्रिपरिषद् में तीन प्रकार के मंत्री होते हैं –

1. कैबिनेट मंत्री – प्रथम श्रेणी में उन मंत्रियों को लिया जाता है, जो अनुभवी, प्रभावशाली एवं अधिक विश्वसनीय होते हैं। ये कैबिनेट की प्रत्येक बैठक में भाग लेते हैं और एक या अधिक विभागों के प्रभारी होते हैं।

2. राज्यमंत्री – इसमें राज्यमंत्रियों को सम्मिलित किया जाता है। इसमें दो प्रकार के मंत्री होते हैं – (क) राज्यमंत्री, (ख) राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार)। स्वतंत्र प्रभार वाले राज्यमंत्री मंत्रिमण्डल के सदस्य होते हैं।

3. उपमंत्री – इसके अन्तर्गत उपमंत्री आते हैं। ये किसी कैबिनेट मंत्री या राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) के अधीनस्थ कार्य करते हैं। ये कैबिनेट के सदस्य नहीं होते हैं।

प्रश्न 9.

मंत्रिपरिषद् तथा राष्ट्रपति के सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर :

भारत में कार्यपालिका का अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से मंत्रिपरिषद् का गठन उसे परामर्श देने के लिए किया जाता है; किन्तु वास्तविक स्थिति इसके विपरीत है। मंत्रिपरिषद् के निर्णय एवं परामर्श राष्ट्रपति को मानने पड़ते हैं। यद्यपि राष्ट्रपति इनके सम्बन्ध में अपनी व्यक्तिगत असहमति प्रकट कर सकता है; किन्तु वह मंत्रिपरिषद् के निर्णयों को मानने के लिए बाध्य होता है। भारतीय संविधान में किए गए 42वें तथा 44वें संशोधन के अनुसार, राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् का परामर्श कानूनी दृष्टिकोण से मानने के लिए बाध्य है। वह केवल मंत्रिमण्डल से पुनर्विचार के लिए आग्रह ही कर सकता है। वह मंत्रिपरिषद् की नीतियों को किस रूप में प्रभावित करता है, यह उसके व्यक्तित्व पर निर्भर है। मंत्रिपरिषद् में लिए गए समस्त निर्णयों से राष्ट्रपति को अवगत कराया जाता है तथा राष्ट्रपति मंत्रिमण्डल से किसी भी प्रकार की सूचना माँग सकता है। राष्ट्रपति ही मंत्रिमण्डल का गठन करता है। तथा उसे शपथ ग्रहण कराता है। प्रधानमंत्री के परामर्श पर वह किसी भी मंत्री को पदच्युत कर सकता

प्रश्न 10.

प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति के पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।

उत्तर :

सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है और मंत्रिमण्डल राष्ट्रपति को सहायता एवं परामर्श देने वाली समिति है। राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। वह स्व-विवेकानुसार आचरण उसी समय कर सकता है, जब लोकसभा में किसी दल का स्पष्ट बहुमत न हो। परन्तु व्यावहारिक स्थिति यह है कि राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री और मंत्रिमण्डल का परामर्श मानना होता है; क्योंकि भारत में संसदात्मक शासन व्यवस्था है तथा मंत्रिमण्डल संसद (लोकसभा) के प्रति उत्तरदायी है। 42वें 44वें संवैधानिक संशोधनों द्वारा अब राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री एवं मंत्रिमण्डल का परामर्श मानना आवश्यक हो गया है। इस प्रकार राष्ट्रपति केवल कार्यपालिका का वैधानिक अध्यक्ष तथा प्रधानमंत्री वास्तविक अध्यक्ष है। वह राष्ट्रपति और मंत्रिमण्डल के मध्य एक कड़ी के रूप में कार्य करता है।

प्रश्न 11.

मंत्रियों के सामूहिक उत्तरदायित्व का अभिप्राय समझाइए। एक उदाहरण भी दीजिए।

उत्तर :

मंत्रिमण्डलीय कार्यप्रणाली का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है—सामूहिक उत्तरदायित्व। मंत्रिगण व्यक्तिगत रूप से तो संसद के प्रति उत्तरदायी होते ही हैं, इसके अतिरिक्त सामूहिक रूप से प्रशासनिक नीति और समस्त प्रशासनिक कार्यों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण मंत्रिमण्डल एक इकाई के रूप में कार्य करता है और सभी मंत्री एक-दूसरे के निर्णय तथा कार्य के लिए उत्तरदायी हैं। यदि लोकसभा किसी एक मंत्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करे अथवा उस विभाग से सम्बन्धित विधेयक रद्द कर दे तो समस्त मंत्रिमण्डल को त्याग-पत्र देना होता है।

प्रश्न 12.

किन परिस्थितियों में राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति में अपने विवेक का प्रयोग करता है?

उत्तर :

निम्नलिखित परिस्थितियों में राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति में अपने विवेक का प्रयोग कर सकता है

—

1. यदि लोकसभा में किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो।
2. प्रधानमंत्री का आकस्मिक निधन हो जाए अथवा प्रधानमंत्री त्याग-पत्र दे दे।
3. राष्ट्रपति लोकसभा भंग करके कुछ समय के लिए किसी को भी प्रधानमंत्री नियुक्त कर सकता है।

प्रश्न 13.

मंत्रिपरिषद् का सदस्य बनने के लिए कौन-कौन सी योग्यताएँ होनी चाहिए?

उत्तर :

मंत्रिपरिषद् का सदस्य बनने के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए —

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. वह उन समस्त योग्यताओं को पूर्ण करता हो जो कि केंद्रीय संसद के किसी भी सदन का सदस्य बनने के लिए आवश्यक हैं।
3. वह केंद्रीय संसद के किसी भी सदन का सदस्य अवश्य होना चाहिए। यदि वह संसद के किसी भी सदन का सदस्य नहीं है तो मंत्री बनने के 6 माह के भीतर उसे संसद के किसी भी सदन का सदस्य बनना आवश्यक होगा।

प्रश्न 14.

भारत में संसदीय प्रणाली को क्यों अपनाया गया है?

उत्तर :

भारतीय संविधान में इस बात के लिए लम्बी बहस चली कि संसदीय प्रणाली को अपनाया जाए या अध्यक्षतात्मक प्रणाली को। कुछ सदस्य संसदात्मक प्रणाली के पक्ष में थे तथा कुछ सदस्य स्थिरता के

कारण अध्यक्षात्मक प्रणाली की इच्छा रखते थे। परन्तु अन्त में संसदीय प्रणाली को अपनाने का निर्णय लिया गया। इसके निम्नलिखित कारण थे –

1. संसदीय प्रणाली भारत की परिस्थितियों के अधिक अनुकूल है।
2. संसदीय प्रणाली से भारतीय प्रशासक अधिक परिचित थे।
3. संसदीय सरकार अधिक उत्तरदायी सरकार है।
4. इसमें शासन व जनता के बीच अधिक निकटता है। संसदीय प्रणाली में जनता व जनता के प्रतिनिधि अधिक प्रभावकारी तरीके से कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखते हैं।

प्रश्न 15.

राष्ट्रपति के विधायी कार्य लिखिए।

उत्तर :

राष्ट्रपति भारत संसद का अभिन्न अंग है। संसद में राष्ट्रपति, लोकसभा व राज्यसभा शामिल होते हैं।

राष्ट्रपति विधायी क्षेत्र में निम्नलिखित कार्य करता है –

1. राष्ट्रपति संसद का अधिवेशन आयोजित करता है, स्थगित करता है व लोकसभा को भंग करता
2. राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद लोकसभा व राज्यसभा द्वारा पास किया गया बिल कानून बनता
3. राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात् बजट व धन बिल संसद में पाए किए जा सकते हैं। उसकी स्वीकृति के बाद वे लागू होते हैं।
4. राष्ट्रपति 2 सदस्य लोकसभा में व 12 सदस्य राज्यसभा में मनोनीत कर सकता है।
5. राष्ट्रपति संसद के लिए कोई भी सन्देश भेज सकता है।
6. जब लोकसभा व राज्यसभा का अधिवेशन नहीं चल रहा हो तो कानून की आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रपति अध्यादेश जारी कर सकता है जिसमें कानून का प्रभाव होता है।

प्रश्न 16.

एक लोकसेवक की नियुक्ति किस प्रकार होती है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर :

लोकसेवक स्थायी कार्यपालिका के अन्तर्गत आते हैं जो राजनीतिक कार्यपालिका की नीतियों, आदेशों तथा कानूनों को क्रियान्वयन करते हैं। पदाधिकारी की नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है।

उसकी नियुक्ति की प्रक्रिया निम्नानुसार है –

संघीय पदाधिकारी की नियुक्ति के लिए संघ लोकसेवा आयोग तथा राज्य के पदाधिकारी की नियुक्ति के लिए राज्य लोकसेवा आयोग कार्यरत हैं। सर्वप्रथम पदों के लिए सार्वजनिक सूचना द्वारा योग्यता रखने

वाले उम्मीदवारों से प्रार्थना-पत्र माँगे जाते हैं। यदि आवेदकों की संख्या पदों की संख्या से बहुत अधिक हो तो एक लिखित परीक्षा का आयोजन किया जाता है। लिखित परीक्षा के आधार पर एक योग्यता सूची तैयार की जाती है और उसी के अनुसार एक निश्चित संख्या में उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए बुलाया जाता है। साक्षात्कार में उम्मीदवार की सामान्य ज्ञान, सूझ-बूझ, सतर्कता तथा व्यक्तित्व का परीक्षण किया जाता है और फिर अन्तिम रूप से योग्यता सूची तैयार की जाती है। इस सूची के अनुसार ही पदाधिकारी को नियुक्त किया जाता है और बहुत-से पदों के लिए नियुक्ति से पहले प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

दीर्घ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.

कार्यपालिका के चार कार्यों का वर्णन कीजिए।

या

आधुनिक राज्यों में कार्यपालिका के किन्हीं चार कार्यों का समुचित उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

कार्यपालिका के कार्य

कार्यपालिका के चार कार्य निम्नवत् हैं –

- 1. आन्तरिक शासन सम्बन्धी कार्य** – प्रत्येक राज्य, राजनीतिक रूप में संगठित समाज है और इस संगठित समाज की सर्वप्रथम आवश्यकता शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना होता है तथा यह कार्य कार्यपालिका के द्वारा ही किया जाता है। इसके अतिरिक्त व्यापार और यातायात, शिक्षा और स्वास्थ्य से सम्बन्धित सुविधाओं की व्यवस्था और कृषि पर नियन्त्रण आदि कार्य भी कार्यपालिका द्वारा ही किये जाते हैं।
- 2. सैनिक कार्य** – सामान्यतया राज्य की कार्यपालिका का प्रधान सेनाओं के सभी अंगों (स्थल, जल और वायु) के प्रधान के रूप में कार्य करता है और विदेशी आक्रमण से देश की रक्षा करना . कार्यपालिका का महत्त्वपूर्ण कार्य होता है। अपने इस कार्य के अन्तर्गत कार्यपालिका आवश्यकतानुसार युद्ध अथवा शान्ति की घोषणा कर सकती है।
- 3. विधि-निर्माण सम्बन्धी कार्य** – कार्यपालिका के विधि-निर्माण सम्बन्धी कार्य बहुत कुछ सीमा तक शासन-व्यवस्था के स्वरूप पर निर्भर करते हैं। सभी प्रकार की शासन-व्यवस्थाओं में कार्यपालिका को विधानमण्डल को अधिवेशन बुलाने और स्थगित करने का अधिकार होता है। संसदात्मक शासन में तो कार्यपालिका विधि-निर्माण के क्षेत्र में व्यवस्थापिका का नेतृत्व करती है और विशेष परिस्थितियों में लोकप्रिय सदन को भंग करते हुए नव-निर्वाचन का आदेश दे सकती है। वर्तमान समय में तो यहाँ तक कहा जा सकता है कि कार्यपालिका ही व्यवस्थापिका की स्वीकृति से कानूनों का निर्माण करती है।

4. वित्तीय कार्य – यद्यपि वार्षिक बजट स्वीकृत करने का कार्य व्यवस्थापिका द्वारा किया जाता है, किन्तु इस बजट का प्रारूप तैयार करने का कार्य कार्यपालिका ही कर सकती है। कार्यपालिका का वित्त विभाग आय के विभिन्न साधनों द्वारा प्राप्त आय के उपभोग पर विचार करता है।

प्रश्न 2.

लोकतंत्र में न्यायपालिका की स्वतंत्रता का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

या

न्यायपालिका की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के दो उपायों का उल्लेख कीजिए।

या

न्यायपालिका की स्वतंत्रता और निष्पक्षता सुनिश्चित करने के दो उपाय लिखिए।

उत्तर :

न्यायपालिका की स्वतंत्रता

न्यायपालिका का कार्यक्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है और उसके द्वारा विविध प्रकार के कार्य किये जाते हैं, लेकिन न्यायपालिका इस प्रकार के कार्यों को उसी समय कुशलतापूर्वक सम्पन्न कर सकती है जबकि न्यायपालिका स्वतंत्र हो। न्यायपालिका की स्वतंत्रता से हमारा आशय यह है कि न्यायपालिका को कानूनों की व्याख्या करने और न्याय प्रदान करने के सम्बन्ध में स्वतंत्र रूप से अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए और उन्हें कर्तव्यपालन में किसी से अनुचित तौर पर प्रभावित नहीं होना चाहिए। सीधे-सादे शब्दों में इसका आशय यह है कि न्यायपालिका, व्यवस्थापिका और कार्यपालिका किसी राजनीतिक दल, किसी वर्ग विशेष और अन्य सभी दबावों से मुक्त रहते हुए अपने कर्तव्यों का पालन करे।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के दो उपाय निम्नलिखित हैं

1. न्यायाधीश की योग्यता – न्यायाधीशों का पद केवल ऐसे ही व्यक्तियों को दिया जाए जिनकी व्यावसायिक कुशलता और निष्पक्षता सर्वमान्य हो। राज्य-व्यवस्था के संचालन में न्यायाधिकारी वर्ग का बहुत अधिक महत्त्व होता है और अयोग्य न्यायाधीश इस महत्त्व को नष्ट कर देंगे।

2. कार्यपालिका और न्यायपालिका का पृथक्करण – न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए आवश्यक है कि कार्यपालिका और न्यायपालिका को एक-दूसरे से पृथक् रखा जाना चाहिए। एक ही व्यक्ति के सत्ता अभियोक्ता और साथ-ही-साथ न्यायाधीश होने पर स्वतंत्र न्याय की आशा नहीं की जा सकती है।

प्रश्न 3.

न्यायपालिका के दो कार्यों का उल्लेख कीजिए तथा स्वतंत्र न्यायपालिका के पक्ष में दो तर्क प्रस्तुत कीजिए।

या

लोकतंत्रात्मक शासन में स्वतंत्र न्यायपालिका की आवश्यकता एवं महत्ता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर :

किसी लोकतंत्रात्मक शासन में एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायपालिका सर्वथा अनिवार्य है। इसे आधुनिक और प्रगतिशील संविधानों एवं शासन-व्यवस्था का प्रमुख लक्षण माना जाता है। न्यायपालिका की स्वतंत्रता के महत्त्व को निम्नलिखित रूपों में प्रकट किया जा सकता है –

1. लोकतंत्र की रक्षा हेतु – लोकतंत्र के अनिवार्य तत्त्व स्वतंत्रता और समानता हैं। नागरिकों की स्वतंत्रता और कानून की दृष्टि से व्यक्तियों की समानता -इन दो उद्देश्यों की प्राप्ति स्वतंत्र न्यायपालिका द्वारा ही सम्भव है। इस दृष्टि से स्वतंत्र न्यायपालिका को 'लोकतंत्र का प्राण' कहा जाता है।

2. संविधान की रक्षा हेतु – आधुनिक युग के राज्यों में संविधान की सर्वोच्चता का विचार प्रचलित है। संविधान की रक्षा का दायित्व न्यायपालिका का होता है। न्यायपालिका द्वारा इस दायित्व का भली-भाँति निर्वाह उस समय ही सम्भव है, जब न्यायपालिका स्वतंत्र और निष्पक्ष हो। स्वतंत्र न्यायपालिका संविधान की धाराओं की स्पष्ट व्याख्या करती है तथा व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के उन कार्यों को जो संविधान के विरुद्ध होते हैं, अवैध घोषित कर देती है। इस प्रकार स्वतंत्र न्यायपालिका संविधान की रक्षा करती है।

3. न्याय की रक्षा हेतु – न्यायपालिका का प्रथम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य न्याय करना है। न्यायपालिका यह कार्य तभी ठीक प्रकार से कर सकती है, जबकि वह निष्पक्ष और स्वतंत्र हो तथा व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के प्रभाव से पूर्ण रूप से मुक्त हो।

4. नागरिक अधिकारों की रक्षा हेतु – न्यायपालिका की स्वतंत्रता का महत्त्व अन्य कारणों की अपेक्षा नागरिक अधिकारों की रक्षा की दृष्टि से अधिक है। इसके लिए न्यायपालिका का स्वतंत्र और निष्पक्ष होना अत्यन्त आवश्यक है।

न्यायपालिका के दो कार्य – न्यायपालिका के दो कार्य निम्नलिखित हैं

1. कानूनों की व्याख्या करना – कानूनों की भाषा सदैव स्पष्ट नहीं होती है और अनेक बार कानूनों की भाषा के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के विवाद उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार की प्रत्येक परिस्थिति में कानूनों की अधिकारपूर्ण व्याख्या करने का कार्य न्यायपालिका ही करती है। न्यायालयों द्वारा की गयी इस प्रकार की व्याख्याओं की स्थिति कानून के समान ही होती है।

2. लेख जारी करना – सामान्य नागरिकों या सरकारी अधिकारियों के द्वारा जब अनुचित या अपने अधिकार-क्षेत्र के बाहर कोई कार्य किया जाता है तो न्यायालय उन्हें ऐसा करने से रोकने के लिए विविध प्रकार के लेख जारी करता है। इस प्रकार के लेखों में बन्दी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश और प्रतिषेध आदि लेख प्रमुख हैं।

प्रश्न 4.

मंत्रिपरिषद् तथा मंत्रिमण्डल में क्या अन्तर है?

उत्तर :

मंत्रिपरिषद् तथा मंत्रिमण्डल में अन्तर

मंत्रिपरिषद् और मंत्रिमण्डल का प्रायः लोग एक ही अर्थ में प्रयोग करते हैं, जब कि इनमें अन्तर हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत के संविधान में मात्र मंत्रिपरिषद् का उल्लेख है। मंत्रिपरिषद् तथा मंत्रिमण्डल के अन्तर को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है

(1) आकार में अन्तर – मंत्रिपरिषद् में लगभग 60 मंत्री होते हैं, जब कि मंत्रिमण्डल में प्रायः 15 से 20 मंत्री होते हैं।

(2) मंत्रिमण्डल, मंत्रिपरिषद् का भाग – मंत्रिमण्डल, मंत्रिपरिषद् का हिस्सा होता है। इसी कारण अनेक विद्वानों ने इसे 'बड़े घरे में छोटे घरे' की संज्ञा दी है।

(3) प्रभाव में अन्तर – मंत्रिमण्डल के सदस्यों का नीति-निर्धारण पर पूर्ण नियन्त्रण होता है तथा समस्त महत्त्वपूर्ण निर्णय मंत्रिमण्डल द्वारा ही लिये जाते हैं। मंत्रिपरिषद् नीति-निर्धारण में हिस्सा नहीं लेती।

(4) मंत्रिमण्डल की बैठकें लगातार होती रहती हैं – मंत्रिमण्डल की बैठकें साधारणतः सप्ताह में एक बार तथा कई बार भी होती हैं, जब कि मंत्रिपरिषद् की बैठकें कभी नहीं होती हैं।

(5) सभी मंत्री मंत्रिपरिषद् के सदस्य होते हैं – जब कि मंत्रिमण्डल के सदस्य मात्र कैबिनेट मंत्री ही होते हैं।

(6) वेतन एवं भत्तों में अन्तर – कैबिनेट मंत्रियों को अन्य मंत्रियों की तुलना में अधिक वेतन एवं भत्ते प्राप्त होते हैं।

प्रश्न 5.

नौकरशाही की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

नौकरशाही की विशेषताएँ

1. निश्चित कार्यक्षेत्र – नौकरशाही प्रणाली द्वारा प्रशासनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जिन नियत क्रियाओं की आवश्यकता होती है उनको सुनिश्चित क्रम के आधार पर सरकारी कार्यों के रूप में विभाजित कर दिया जाता है। इस प्रकार नौकरशाही पद्धति में पदाधिकारियों का कार्यक्षेत्र सुनिश्चित कर दिया जाता है।

2. आदेशों का स्पष्टीकरण – इस व्यवस्था में विभिन्न पदाधिकारियों के आदेशों के अधिकार-क्षेत्र को भी स्पष्ट कर दिया जाता है।

3. नियमों के प्रति आस्था – ये आदेश ऐसे नियमों की सीमा से बँधे होते हैं जो अधिकारियों को कार्य पूर्ण करने, चाहे बलपूर्वक ही हो, के लिए प्राप्त होते हैं।

4. योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति – इन दायित्वों की नियमित एवं सर्वदा पूर्ति के लिए तथा सम्बन्धित अधिकारों के क्रियान्वयन हेतु वैधानिक व्यवस्था की जाती है। दायित्वों की पूर्ति के लिए केवल योग्य व्यक्तियों की व्यवस्था की जाती है।

5. **पद-सोपान पद्धति पर आधारित** – नौकरशाही पद-सोपान पद्धति पर आधारित होती है। इसमें उच्च पदाधिकारी अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों को आदेश तथा निर्देश प्रदान करते हैं।
6. **पद के लिए निश्चित योग्यताएँ** – इस पद्धति में प्रत्येक पद के लिए योग्यताएँ निर्धारित कर दी जाती हैं।
7. **विशिष्ट वर्ग** – इस व्यवस्था में पदाधिकारियों का एक विशिष्ट वर्ग बन जाता है।
8. **नियमों के प्रति आस्था** – इसमें अधिकारी और कर्मचारी नियमों तथा अभिलेखों के प्रति अत्यधिक आस्था रखते हैं। वे नियमों के लकीर के फकीर बन जाते हैं।
9. **कठोर एवं व्यवस्थित अनुशासन तथा नियन्त्रण** – नौकरशाही संगठन में पदाधिकारी नियन्त्रण एवं अनुशासन में रहकर अपने कार्यों का सम्पादन करते हैं।

प्रश्न 6.

मन्त्रिपरिषद् की स्वेच्छाचारिता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर :

मन्त्रिपरिषद् की स्वेच्छाचारिता

संविधान के अनुसार, मन्त्रिपरिषद् के कार्यों पर संसद का नियन्त्रण होता है। यदि लोकसभा मन्त्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर दे तो उसे त्याग-पत्र देना पड़ता है। यह वैधानिक स्थिति है; परन्तु वास्तविक स्थिति इससे भिन्न है। भारत में मन्त्रिपरिषद् का पूर्ण नियन्त्रण है। संसद में वाद-विवाद होते हैं और मतदान द्वारा विधेयकों पर निर्णय लिए जाते हैं, परन्तु अन्त में सम्पूर्ण शक्ति सत्ताधारी दल की ही होती है। मन्त्रिपरिषद् सत्ताधारी दल की शक्ति का केन्द्र है और संसद उसके निर्णयों को अस्वीकार करने में असमर्थ है; क्योंकि मन्त्रिपरिषद् का सदन में बहुमत होता है तथा बहुमत प्राप्त दल के नेता दलीय अनुशासन के कारण मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत विधेयकों का समर्थन करते हैं। पार्टी हिक्व (आदेश) जारी कर दिया जाता है, तब प्रत्येक सदस्य को दल के निर्देशों के अनुसार कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार भारतीय शासन में मन्त्रिपरिषद् की तानाशाही प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

मन्त्रिपरिषद् की स्वेच्छाचारिता का एक कारण यह भी है कि मन्त्रिपरिषद् जनता के बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है। लोकसभा के सदस्यों का निर्वाचन जनता करती है और मन्त्रिपरिषद् को लोकसभा का बहुमत प्राप्त होता है। इसलिए परोक्ष रूप में जनता के बहुमत का समर्थन भी मन्त्रिपरिषद् को प्राप्त होता है। वह सदैव इस बात के लिए प्रयत्नशील रहती है कि जनता का बहुत उसके अनुकूल रहे। इसलिए उसकी स्वेच्छाचारिता पर जनता अंकुश लगा सकती है। यदि वह जनमत की उपेक्षा करके स्वेच्छाचारिता की वृत्ति को अपना ले तो उसको शासन-कार्य में सफलता प्राप्त नहीं होगी। अतः मन्त्रिपरिषद् को जनमत के अनुकूल ही शासन-कार्य करना पड़ता है।

प्रश्न 7.

मन्त्रिपरिषद् तथा लोकसभा के संबंधों को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर :

मन्त्रिपरिषद् तथा लोकसभा का सम्बन्ध

संविधान के अनुसार, मन्त्रिपरिषद् तथा लोकसभा परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। मन्त्रिपरिषद् सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है। सामूहिक उत्तरदायित्व का तात्पर्य है कि एक मंत्री की गलती सभी मंत्रियों की गलती मानी जाती है, जिसके परिणामस्वरूप जब एक मंत्री के त्यागपत्र देने की बात आती है तो सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पड़ता है। इस प्रकार मंत्री एक-दूसरे से परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। लोकसभा; प्रश्नों, पूरक-प्रश्नों, काम रोको, स्थगन तथा निन्दा-प्रस्तावों द्वारा मन्त्रिपरिषद् पर नियन्त्रण रखती है तथा इन आधारों पर मन्त्रिपरिषद् को पदच्युत कर सकती है –

1. **अविश्वास प्रस्ताव द्वारा** – लोकसभा के सदस्य मन्त्रिपरिषद् से असन्तुष्ट होकर सदन के सामने अविश्वास का प्रस्ताव ((No Confidence Motion) प्रस्तुत कर सकते हैं। इस प्रस्ताव के पारित हो जाने पर मन्त्रिपरिषद् को त्यागपत्र देना होता है।
2. **विधेयक की अस्वीकृति** – मन्त्रिपरिषद् द्वारा प्रस्तुत किसी विधेयक को यदि लोकसभा स्वीकृत न करे तो ऐसी दशा में भी मन्त्रिपरिषद् का त्यागपत्र उसका नैतिक दायित्व बन जाता है, क्योंकि यह इस बात का सूचक होता है कि सदन में मन्त्रिपरिषद् (अर्थात् बहुमत दल) ने अपना विश्वास खो दिया है।
3. **किसी मंत्री के प्रति अविश्वास** – यदि लोकसभा किसी मंत्री-विशेष के प्रति अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर दे तो भी सामूहिक रूप से मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।
4. **कटौती का प्रस्ताव** – जिस समय लोकसभा में वार्षिक बजट प्रस्तुत किया जाता है, उस समय यदि लोकसभा बजट में कटौती का प्रस्ताव पारित कर दे या किसी काँग को. अस्वीकृत कर दे तो भी मन्त्रिपरिषद् को अपना त्यागपत्र देने के लिए विवश होना पड़ता है।
5. **गैर-सरकारी प्रस्ताव** – यदि लोकसभा किसी ऐसे गैर-सरकारी प्रस्ताव को स्वीकृत कर दे, जिसका मन्त्रिमण्डल विरोध कर रहा हो, तो इस स्थिति में मन्त्रिमण्डल को अपना पद त्यागना होगा।
सैद्धान्तिक दृष्टि से तो मन्त्रिमण्डल पर संसद द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है; किन्तु व्यवहार में दलीय अनुशासन के कारण मन्त्रिमण्डल ही संसद पर नियन्त्रण रखता है। मन्त्रिमण्डल के परामर्श पर राष्ट्रपति लोकसभा को भंग कर सकता है।

प्रश्न 8.

मिश्रित सरकारों के युग में प्रधानमंत्री की स्थिति की समीक्षा कीजिए।

उत्तर :

वर्तमान भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में मिश्रित सरकारों का अस्तित्व है। यह 1996 से आरम्भ हुआ

था। जब लोकसभा में किसी भी एक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो और दो या दो से अधिक दल मिलकर बहुमत का निर्माण करते हों तथा मिला-जुला मंत्रिमण्डल बनाते हों तो उसे मिली-जुली सरकार कहते हैं। देश में बहुदलीय व्यवस्था अस्तित्व में है और केन्द्र तथा बहुत-से राज्यों में भी मिले-जुले मंत्रिमण्डल हैं।

मिल-जुले मंत्रिमण्डल के वातावरण ने संसदीय शासन-प्रणाली की कई विशेषताओं को प्रभावित किया है और विशेष रूप से प्रधानमंत्री की स्थिति पर विपरीत प्रभाव डाला है। इसका एक प्रभाव यह भी देखने में आ रहा है कि अब भारत में मंत्रिमण्डल की राजनीतिक एकरूपता भी प्रभावित है और सरकार में भागीदार विभिन्न दलों के सदस्य मंत्री एक-दूसरे की आलोचना भी करते हैं और सार्वजनिक रूप में किसी भी विषय पर विरोधी विचार भी प्रकट करते हैं। अब व्यावहारिक रूप से मंत्रिमण्डल एक इकाई के रूप में कार्य नहीं कर पाता।

प्रधानमंत्री की स्थिति पर प्रभाव – मिली-जुली सरकार का सर्वाधिक विपरीत प्रभाव प्रधानमंत्री की स्थिति पर पड़ा है। उसे अब वह शक्तिशाली स्थिति प्राप्त नहीं है जो एक दल की सरकार वाले मंत्रिमण्डल में प्राप्त थी। अब उसका अधिकतर समय सहयोगी दलों की नाराजगी दूर करने और उन्हें अपने साथ रखने में व्यतीत होता दिखाई देता है। प्रधानमंत्री की स्थिति पर विपरीत प्रभाव दर्शाने वाले बिन्दु निम्नलिखित हैं

1. अब प्रधानमंत्री मंत्रियों की नियुक्ति में स्वतंत्र नहीं रहा है। पूर्व से ही निश्चित हो जाता है कि सहयोगी दलों से कितने सदस्य मंत्रिमण्डल में लिए जाएँगे।
2. मिश्रित सरकार के निर्माण में सहयोगी दलों से लिए जाने वाले मंत्रियों के विभागों का निर्णय भी पहले से ही कर दिया जाता है। उसे ऐसे लोगों को भी मंत्री नियुक्त करना पड़ता है जिनकी आपराधिक पृष्ठभूमि रही हो।
3. प्रधानमंत्री अब चाहते हुए भी किसी मंत्री को अपदस्थ नहीं करवा सकता, विशेषकर सहयोगी दलों से लिए गए मंत्रियों को, चाहे उनकी योग्यता और कार्यक्रम पर प्रश्न-चिह्न ही क्यों न लगा हो।

प्रश्न 9.

स्थायी कार्यपालिका नौकरशाही का क्या अर्थ है? नौकरशाही के गुण लिखिए।

उत्तर :

नौकरशाही को अधिकारी राज्य' अथवा 'सेवकतन्त्र' भी कहा जाता है। यह पदाधिकारी पद्धतियों में सबसे प्राचीन, व्यापक तथा चर्चित है। इसका अर्थ एक ऐसी शासन-व्यवस्था से है, जिसमें कार्यालयों द्वारा शासन संचालित किया जाता है। नौकरशाही' शब्द अंग्रेजी के 'Bureaucracy' का पर्यायवाची है। 'Bureaucracy' फ्रेंच भाषा के 'Bureau' तथा ग्रीक भाषा के क्रेसी (kratein) से बना है। शाब्दिक अर्थ में यह अधिकारियों का शासन है। रोबर्ट सी० स्टोन के अनुसार, "इस पद का शाब्दिक अर्थ कार्यालय द्वारा

शासन अथवा अधिकारियों द्वारा शासन है। सामान्यतः इसका प्रयोग । दोषपूर्ण प्रशासनिक संस्थाओं के सन्दर्भ में किया गया है। फ्रेंच भाषा में 'ब्यूरो' का अर्थ लिखने की मेज या डेस्क से है। इस प्रकार नौकरशाही का अर्थ उस व्यवस्था से है जिसमें कर्मचारी केवल दफ्तर में बैठकर कार्य करते हैं। यह व्यवस्था अर्थात् नौकरशाही प्रशासन के विकृत रूप को प्रकट करती है। जब कर्मचारी वर्ग अपने कार्यों को केवल कानूनी व्यवस्था के अनुसार ही संचालित करता है और व्यवस्था में लालफीताशाही, अनधिकार हस्तक्षेप, अपव्यय, भ्रष्टाचार आदि दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं, तो यह व्यवस्था 'नौकरशाही' के नाम से जानी जाती है।

नौकरशाही के गुण

नौकरशाही में अनेक गुण विद्यमान हैं। इसके प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं –

1. **कार्यकुशलता** – इस पद्धति का प्रमुख गुण यह है कि यह प्रशासन को कार्यकुशलता प्रदान करती है।
2. **प्रशासकीय एकता** – प्रशासकीय एकता को सुदृढ़ता प्रदान करने में यह पद्धति विशेष रूप से उपयोग सिद्ध हुई है।
3. **राजनीतिक तथा वैयक्तिक प्रभावों से दूर** – इस व्यवस्था में पदाधिकारी एवं कर्मचारी राजनीतिक एवं वैयक्तिक प्रभावों से दूर रहकर अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं।
4. **कानून का पालन** – इस व्यवस्था का एक प्रमुख गुण यह है कि इसमें अधिकारी तथा कर्मचारी कानूनों का कठोरता से पालन करते हैं। अतः किसी के साथ पक्षपात नहीं किया जाता है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.

संसदात्मक कार्यपालिका से क्या आशय है? संसदात्मक कार्यपालिका के गुण और दोषों का वर्णन कीजिए।

उत्तर :

संसदात्मक कार्यपालिका से आशय

संसदात्मक कार्यपालिका उसे कहते हैं, जिसमें कार्यपालिका संसद के नियन्त्रण में रहती है। इस सरकार में देश के सम्पूर्ण शासन का कार्यभार मंत्रिपरिषद् पर होता है और वह अपने कार्यों के लिए व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है। वस्तुतः देश की वास्तविक कार्यपालिका मंत्रिपरिषद् ही होती है। उस पर संसद का नियन्त्रण अवश्य होता है। देश का प्रधान (राष्ट्रपति) नाममात्र का प्रधान होता है। उसे कार्यपालिका से सम्बन्धित समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं, किन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाए तो वह उनका स्वेच्छा से प्रयोग नहीं कर पाता है। भारत और ग्रेट ब्रिटेन में इसी प्रकार की सरकारें विद्यमान हैं।

संसदात्मक कार्यपालिका के गुण

संसदात्मक कार्यपालिका को उत्कृष्ट शासन-प्रणाली के रूप में स्वीकार किया जाता है। इस शासन-प्रणाली के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं –

- 1. कार्यपालिका और व्यवस्थापिका में सहयोग** – इस शासन-प्रणाली में कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका में एक-दूसरे के प्रति पूर्ण सहयोग की भावना होती है; क्योंकि मंत्रिमण्डल के ही सदस्य विधानमण्डल के भी सदस्य होते हैं। इसी कारण कार्यपालिका इन कानूनों को बड़ी सरलता से पारित करवा लेती है, जिन्हें वह देश के लिए उपयोगी समझती है। इस प्रकार व्यवस्थापिका को देश की आवश्यकतानुसार कानून बनाने में भी सहायता मिलती है।
- 2. कार्यपालिका निरंकुश नहीं हो पाती** – संसदात्मक कार्यपालिका निरंकुश नहीं हो पाती है, क्योंकि उसे किसी भी कानून को पारित करवाने के लिए व्यवस्थापिका पर आश्रित रहना पड़ता है। वह स्वेच्छा से किसी भी कानून को बनाकर तथा उसे देश में लागू करके निरंकुश नहीं बन सकती है। इसके अतिरिक्त व्यवस्थापिका को यह भी अधिकार है कि वह मंत्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करके उसे अपदस्थ कर दे। विधायिका मंत्रियों से प्रश्न तथा पूरक प्रश्न भी पूछ सकती है।
- 3. परिवर्तनशीलता** – संसदात्मक कार्यपालिका परिवर्तनशील है। इसका तात्पर्य यह है कि इसमें कार्यपालिका को बदलने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं होती है; क्योंकि कार्यरत मंत्रिपरिषद् को किसी भी समय परिवर्तित किया जा सकता है।
- 4. राजनीतिक शिक्षा का साधन** – संसदात्मक कार्यपालिका में राजनीतिक दलों की बहुलता होती है। ये सभी दल सामान्य जनता के समक्ष अपने-अपने कार्यक्रम रखकर उसमें राजनीतिक चेतना को जाग्रत करने का प्रयत्न करते हैं।
- 5. लोकमत एवं लोक-कल्याण पर आधारित** – संसदात्मक कार्यपालिका प्रजातन्त्र प्रणाली का ही एक रूप है, इसलिए यह लोकमत का ध्यान रखते हुए लोक-कल्याणकारी कार्य करने का प्रयत्न करती है।
- 6. लोकतंत्रीय सिद्धान्तों की रक्षा** – लोकतंत्रीय सिद्धान्तों की रक्षा बहुत सीमा तक संसदात्मक कार्यपालिका में ही सम्भव है, क्योंकि संसदात्मक कार्यपालिका में जन-प्रतिनिधियों की प्रत्यक्ष जवाबदेही जनता के प्रति होती है।

संसदात्मक कार्यपालिका के दोष

संसदात्मक कार्यपालिका के प्रमुख दोषों का उल्लेख निम्नलिखित है –

- 1. शक्ति-पृथक्करण सिद्धान्त के विरुद्ध** – संसदात्मक कार्यपालिका का सबसे गम्भीर दोष यह है कि यह शक्ति-पृथक्करण सिद्धान्त के विरुद्ध है। इसमें मंत्रिपरिषद् व्यवस्थापिका का ही एक अंग होती है। इसलिए नागरिकों को सदैव खतरा बना रहता है।

2. शीघ्र निर्णय का अभाव – किसी असामान्य संकट की स्थिति में भी कोई परिवर्तन या नियम शीघ्र लागू करना असम्भव होता है, क्योंकि कार्यपालिका को व्यवस्थापिका से कोई भी कानून लागू करने से पूर्व आज्ञा लेनी पड़ती है; और इसकी प्रक्रिया बहुत जटिल होती है।

3. दलीय तानाशाही का भय – इस व्यवस्था में जिस राजनीतिक दल का व्यवस्थापिका में बहुमत होता है, उसी दल के नेताओं को मंत्रिपरिषद् निर्मित करने का अधिकार होता है। ऐसी स्थिति में इस बात की प्रबल सम्भावना रहती है कि बहुमत प्राप्त सत्तारूढ़ दल स्वेच्छाचारी बन जाए और अपनी मनमानी करने लगे।

4. सरकार की अस्थिरता – इस प्रकार की सरकार में मंत्रिमण्डल का कार्यकाल अनिश्चित होता है। व्यवस्थापिका में मंत्रिमण्डल का बहुमत न रह पाने की स्थिति में मंत्रिमण्डल को शीघ्र ही त्यागपत्र देना पड़ जाता है। अतः कभी-कभी ऐसा होता है कि ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य बीच में ही छूट जाते हैं, जो वास्तव में देश के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं। बार-बार सरकार के बनने तथा बिगड़ने से राष्ट्र के धन का अपव्यय होता है तथा बार-बार मतदान प्रक्रिया में भाग लेने के कारण मतदाताओं की उदासीनता बढ़ जाती है।

5. संकट के समय दुर्बल – राष्ट्रीय संकट (आपत्ति) के समय यह सरकार अति दुर्बल अर्थात् शक्तिहीन सिद्ध होती है। संसदात्मक कार्यपालिका में शासन की शक्ति किसी एक व्यक्ति में न होकर मंत्रिपरिषद् के समस्त सदस्यों में निहित होती है। इसलिए संकट के समय शीघ्र निर्णय नहीं हो पाते।

6. योग्य व्यक्तियों की सेवाओं का लाभ न मिल पाना – संसदीय कार्यपालिका में सरकार बहुमत दल की ही बनती है, इसलिए विरोधी दल के योग्य व्यक्तियों को कार्यपालिका से सम्बन्धित शासन कार्यों में अपनी सेवा प्रदान करने का अवसर नहीं मिलता है।

प्रश्न 2.

कार्यपालिका से आप क्या समझते हैं। इसके विविध रूपों का वर्णन कीजिए।

या

कार्यपालिका के प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।

या

कार्यपालिका क्या है? आधुनिक काल में इसके बढ़ते हुए महत्त्व के क्या कारण हैं?

या

कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।

या

कार्यपालिका के प्रमुख कार्यों एवं महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

या

कार्यपालिका से आप क्या समझते हैं? कार्यपालिका के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए। वर्तमान समय में कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि के कारणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

कार्यपालिका सरकार का दूसरा प्रमुख अंग है। इतना ही नहीं, 'सरकार' शब्द का आशय कार्यपालिका से ही होता है। कार्यपालिका ही व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानूनों को क्रियान्वित करती है और उनके आधार पर प्रशासन का संचालन करती है।

गार्नर ने कार्यपालिका का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है- “व्यापक एवं सामूहिक अर्थ में कार्यपालिका के अधीन वे सभी अधिकारी, राज्य-कर्मचारी तथा एजेन्सियाँ आ जाती हैं, जिनका कार्य राज्य की इच्छा को, जिसे व्यवस्थापिका ने व्यक्त कर कानून का रूप दे दिया है, कार्यरूप में परिणत करना है।”

गिलक्रिस्ट के अनुसार, “कार्यपालिका सरकार का वह अंग है, जो कानूनों में निहित जनता की इच्छा को लागू करती है।

कार्यपालिका के विविध रूप (प्रकार)

कार्यपालिका के निम्नलिखित रूप होते हैं –

- 1. नाममात्र की कार्यपालिका** – ऐसी कार्यपालिका; जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति, जो सिद्धान्त रूप से शासन का प्रधान होता है तथा जिसके नाम से शासन के समस्त कार्य किये जाते हैं, परन्तु वह स्वयं किसी भी अधिकार का प्रयोग नहीं करता; नाममात्र की होती है। ब्रिटेन की सम्राज्ञी तथा भारत का राष्ट्रपति नाममात्र की कार्यपालिका हैं।
- 2. वास्तविक कार्यपालिका** – वास्तविक कार्यपालिका उसे कहते हैं जो वास्तव में कार्यकारिणी की शक्तियों का प्रयोग करती है। ब्रिटेन, फ्रांस तथा भारत में मंत्रि-परिषद् वास्तविक कार्यपालिका के उदाहरण हैं।
- 3. एकल कार्यपालिका** – एकल कार्यपालिका वह होती है, जिसमें कार्यपालिका की सम्पूर्ण शक्तियाँ एक व्यक्ति के अधिकार में होती हैं। अमेरिका का राष्ट्रपति एकल कार्यपालिका का उदाहरण है।
- 4. बहुल कार्यपालिका** – बहुल कार्यपालिका में कार्यकारिणी शक्ति किसी एक व्यक्ति में निहित न होकर अधिकारियों के समूह में निहित होती है। इस प्रकार की कार्यपालिका स्विट्जरलैण्ड में है।
- 5. पैतृक कार्यपालिका** – पैतृक कार्यपालिका उस कार्यपालिका को कहते हैं, जिसके प्रधान का पद पैतृक अथवा वंश-परम्परा के आधार पर होता है। ऐसी कार्यपालिका ग्रेट ब्रिटेन में है।
- 6. निर्वाचित कार्यपालिका** – जहाँ कार्यपालिका के प्रधान का निर्वाचन किया जाता है, वहाँ निर्वाचित कार्यपालिका होती है। ऐसी कार्यपालिका भारत तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में है।
- 7. संसदात्मक कार्यपालिका** – इसमें शासन-सम्बन्धी अधिकार मंत्रि-परिषद् के सदस्यों में निहित होते हैं। वे व्यवस्थापिका (भारत में संसद) के सदस्यों में से ही चुने जाते हैं और अपनी नीतियों के लिए व्यक्तिगत रूप से तथा सामूहिक रूप से उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं। व्यवस्थापिका मंत्रि-परिषद् के

विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करके उसे पदच्युत कर सकती है। ब्रिटेन तथा भारत में ऐसी ही कार्यपालिका है।

8. अध्यक्षात्मक कार्यपालिका – इसमें मुख्य कार्यपालिका व्यवस्थापिका से पृथक् तथा स्वतंत्र होती है और उसके प्रति उत्तरदायी नहीं होती। संयुक्त राज्य अमेरिका में इसी प्रकार की कार्यपालिका है। वहाँ पर कार्यपालिका का प्रधान राष्ट्रपति होता है, जिसका निर्वाचन चार वर्ष के लिए किया जाता है। इस अवधि के पूर्व महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रक्रिया द्वारा उसे अपदस्थ नहीं किया जा सकता। वह अपने कार्य के लिए वहाँ की कांग्रेस (व्यवस्थापिका) के प्रति उत्तरदायी नहीं है। वह अपनी सहायता के लिए मंत्रिमण्डल का निर्माण कर सकता है, परन्तु उनके किसी भी परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं है।

कार्यपालिका के कार्य

कार्यपालिका के कार्य वास्तव में सरकार के स्वरूप पर निर्भर करते हैं। आधुनिक राज्यों में कार्यपालिका का महत्त्व बढ़ता जा रहा है तथा इसके मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं –

1. कानूनों को लागू करना और शान्ति-व्यवस्था बनाये रखना – कार्यपालिका का प्रथम कार्य व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानूनों को राज्य में लागू करना तथा देश में शान्ति व्यवस्था को बनाये रखना होता है। कार्यपालिका का कार्य कानूनों को लागू करना है, चाहे वह कानून अच्छा हो या बुरा। कार्यपालिका देश में शान्ति व कानून-व्यवस्था बनाये रखने के लिए पुलिस आदि का प्रबन्ध भी करती है।

2. नीति-निर्धारण सम्बन्धी कार्य – कार्यपालिका का एक महत्त्वपूर्ण कार्य नीति-निर्धारण करना है। संसदीय सरकार में कार्यपालिका अपनी नीति-निर्धारित करके उसे संसद के समक्ष प्रस्तुत करती है। अध्यक्षात्मक सरकार में कार्यपालिका को अपनी नीतियों को विधानमण्डल के समक्ष प्रस्तुत नहीं करना पड़ता है। वस्तुतः कार्यपालिका ही देश की आन्तरिक तथा विदेश नीति को निश्चित करती है और उस नीति के आधार पर ही अपना शासन चलाती है। नीतियों को लागू करने के लिए शासन को कई विभागों में बाँटा जाता है।

3. नियुक्ति सम्बन्धी कार्य – कार्यपालिका को देश का शासन चलाने के लिए अनेक कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ती है। प्रशासनिक कर्मचारियों की नियुक्ति अधिकतर प्रतियोगिता परीक्षाओं के आधार पर की जाती है। भारत में राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, राजदूतों, एडवोकेट जनरल, संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की नियुक्ति करता है। अमेरिका में राष्ट्रपति को उच्चाधिकारियों की नियुक्ति के लिए सीनेट की स्वीकृति लेनी पड़ती है। अमेरिका का राष्ट्रपति उन सभी कर्मचारियों को हटाने का अधिकार रखता है, जिन्हें कांग्रेस महाभियोग के द्वारा नहीं हटा सकती।

4. वैदेशिक कार्य – दूसरे देशों से सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य कार्यपालिका के द्वारा ही किया जाता है। विदेश नीति को कार्यपालिका ही निश्चित करती है तथा दूसरे देशों में अपने राजदूतों को भेजती है और दूसरे देशों के राजदूतों को अपने देश में रहने की स्वीकृति प्रदान करती है। दूसरे देशों से सन्धि या समझौते करने के लिए कार्यपालिका को संसद की स्वीकृति लेनी पड़ती है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में कार्यपालिका का अध्यक्ष या उसका प्रतिनिधि भाग लेता है।

5. विधि-सम्बन्धी कार्य – कार्यपालिका के पास विधि-सम्बन्धी कुछ शक्तियाँ भी होती हैं। संसदीय सरकार में कार्यपालिका की विधि-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथा मंत्रिमण्डल के सदस्य व्यवस्थापिका के ही सदस्य होते हैं। वे व्यवस्थापिका की बैठकों में भाग लेते हैं और प्रस्ताव प्रस्तुत करते हैं। वास्तव में 95 प्रतिशत प्रस्ताव मंत्रियों द्वारा ही प्रस्तुत किये जाते हैं, क्योंकि मंत्रिमण्डल का व्यवस्थापिका में बहुमत होता है, इसलिए प्रस्ताव आसानी से पारित हो जाते हैं। संसदीय सरकार में मंत्रिमण्डल के समर्थन के बिना कोई प्रस्ताव पारित नहीं हो सकता। संसदीय सरकार में कार्यपालिका को व्यवस्थापिका का अधिवेशन बुलाने का अधिकार भी होता है। जब व्यवस्थापिका का अधिवेशन नहीं हो रहा होता है, उस समय कार्यपालिका को अध्यादेश जारी करने का अधिकार भी प्राप्त होता है।

6. वित्तीय कार्य – राष्ट्रीय वित्त पर व्यवस्थापिका का नियन्त्रण होता है। वित्तीय व्यवस्था बनाये रखने में कार्यपालिका की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, परन्तु कार्यपालिका ही बजट तैयार करके उसे व्यवस्थापिका में प्रस्तुत करती है। कार्यपालिका को व्यवस्थापिका में बहुमत का समर्थन प्राप्त होने के कारण उसे बजट पारित कराने में किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। नये कर लगाने व पुराने कर समाप्त करने के प्रस्ताव भी कार्यपालिका ही व्यवस्थापिका में प्रस्तुत करती है। अध्यात्मिक सरकार में कार्यपालिका स्वयं बजट प्रस्तुत नहीं करती, अपितु बजट कार्यपालिका की देख-रेख में ही तैयार किया जाता है। भारत में वित्तमंत्री बजट प्रस्तुत करता है।

7. न्यायिक कार्य – न्याय करना न्यायपालिका का मुख्य कार्य है, परन्तु कार्यपालिका के पास भी कुछ न्यायिक शक्तियाँ होती हैं। बहुत-से देशों में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश कार्यपालिका द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। कार्यपालिका के अध्यक्ष को अपराधी के दण्ड को क्षमा करने अथवा कम करने का भी अधिकार होता है। भारत और अमेरिका में राष्ट्रपति को क्षमादान का अधिकार प्राप्त है। ब्रिटेन में यह शक्ति सम्राट के पास है। राजनीतिक अपराधियों को क्षमा करने का अधिकार भी कई देशों में कार्यपालिका को ही प्राप्त है।

8. सैनिक कार्य – देश की बाह्य आक्रमणों से रक्षा के लिए कार्यपालिका अध्यक्ष सेना का अध्यक्ष भी होता है। भारत तथा अमेरिका में राष्ट्रपति अपनी-अपनी सेनाओं के सर्वोच्च सेनापति (कमाण्डर-इन-चीफ) हैं। सेना के संगठन तथा अनुशासन से सम्बन्धित नियम कार्यपालिका द्वारा ही बनाये जाते हैं। आन्तरिक शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखने के लिए भी सेना की सहायता ली जा सकती है। सेना के अधिकारियों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा ही की जाती है। तथा संकटकालीन स्थिति में कार्यपालिका सैनिक कानून लागू कर सकती है। भारत का राष्ट्रपति संकटकालीन घोषणा कर सकता है।

9. संकटकालीन शक्तियाँ – देश में आन्तरिक संकट अथवा किसी विदेशी आक्रमण की स्थिति में कार्यपालिका का अध्यक्ष संकटकाल की घोषणा कर सकता है। संकटकाल में कार्यपालिका बहुत शक्तिशाली हो जाती है और संकट का सामना करने के लिए अपनी इच्छा से शासन चलाती है।

10. उपाधियाँ तथा सम्मान प्रदान करना – प्रायः सभी देशों की कार्यपालिका के पास विशिष्ट व्यक्तियों को उनकी असाधारण तथा अमूल्य सेवाओं के लिए उपाधियाँ और सम्मान प्रदान करने का अधिकार होता है। भारत और अमेरिका में यह अधिकार राष्ट्रपति के पास है, जब कि ब्रिटेन में सम्राट के पास।

कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि के कारण

व्यवस्थापिका की शक्ति के कर्म होने तथा कार्यपालिका की शक्ति में वृद्धि होने के निम्नलिखित कारण हैं –

1. लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा – वर्तमान में सभी देशों में राज्य को लोक-कल्याणकारी संस्था माना जाता है। वह जनता की भलाई के अनेक कार्य करता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, सामाजिक व आर्थिक सुधार, वेतन-निर्धारण आदि इसी के कार्य-क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाता है और जनहित की योजनाएँ क्रियान्वित की जाती हैं। इससे कार्यपालिका का कार्य-क्षेत्र बढ़ जाता है तथा वह व्यापक हो जाती है।

2. दलीय पद्धति – आधुनिक प्रजातन्त्र राजनीतिक दलों के आधार पर संचालित होता है। दलों के आधार पर ही व्यवस्थापिका वे कार्यपालिका का संगठन होता है। संसदीय शासन में बहुमत प्राप्त दल ही कार्यपालिका का गठन करता है। दलीय अनुशासन के कारण कार्यपालिका अधिनायकवादी शक्तियाँ ग्रहण कर लेती है और अपने दल के बहुमत के कारण उसे व्यवस्थापिका का भय नहीं रहता है। व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी रहते हुए भी कार्यपालिका शक्तिशाली होती जा रही है। ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति ने भी कार्यपालिका की शक्तियों में वृद्धि की है।

3. प्रतिनिधायन – व्यवस्थापिका कार्यों की अधिकता तथा व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण कानूनों के सिद्धान्त तथा रूपरेखा की रचना कर शेष नियम बनाने हेतु कार्यपालिका को सौंप देती है। इससे व्यवहार में कानून बनाने का एक व्यापक क्षेत्र कार्यपालिका को प्राप्त हो जाता है। तथा कार्यपालिका की शक्तियों में असाधारण वृद्धि हो जाती है।

4. समस्याओं की जटिलता – वर्तमान में राज्य को अनेक जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिसके लिए विशेष ज्ञान, अनुभव वे योग्यता की आवश्यकता होती है व्यवस्थापिका के सामान्य योग्यता के निर्वाचित सदस्य इन समस्याओं के समाधान में असमर्थ रहते हैं। कार्यपालिका ही इन समस्त समस्याओं का समाधान करती है, इसलिए उसकी शक्तियों की वृद्धि का स्वागत किया जाता है।

5. नियोजन – आज का युग नियोजन का युग है। सभी राष्ट्र अपने विकास के लिए नियोजन की प्रक्रिया को अपनाते हैं। योजनाएँ तैयार करना, उन्हें लागू करना तथा उनका मूल्यांकन करना कार्यपालिका द्वारा ही सम्पन्न होता है। इससे कार्यपालिका का व्यापक क्षेत्र में आधिपत्य हो जाता है।

6. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तथा विदेशी व्यापार – आधुनिक युग में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तथा युद्ध एवं शान्ति के प्रश्न अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। ये कार्यपालिका द्वारा ही सम्पन्न होते हैं इसी प्रकार विदेशी व्यापार, विदेशी सहायता तथा विदेशी पूँजी या विदेशों में पूँजी से सम्बन्धित कार्यों को कार्यपालिका द्वारा सम्पादित करना एक सामान्य प्रक्रिया है। इनसे कार्यपालिका का महत्त्व सरकार के अन्य अंगों से अधिक हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में साम्यवाद के प्रचार तथा प्रसार को रोकने के लिए अमेरिकी कांग्रेस द्वारा राष्ट्रपति को अनेक प्रकार की शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। इससे राष्ट्रपति की शक्तियों में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हो गई है।

7. कार्यपालिका को व्यवस्थापिका के विघटन का अधिकार – वर्तमान में संसदीय शासन में व्यवस्थापिका को विघटित करने का कार्यपालिका को पूर्ण अधिकार है। मंत्रिमण्डल की इस शक्ति के कारण कार्यपालिका की व्यवस्थापिका पर आधिपत्य हो गया है। अध्यक्षतात्मक शासन में कार्यपालिका व्यवस्थापिका को पदच्युत नहीं कर सकती। इस कारण व्यवस्थापिका शक्तिशाली ही बनी रहती है। आधुनिक युग की प्रवृत्ति कार्यपालिका शक्ति के निरन्तर विस्तार की ओर अग्रसर है। लिप्सन के शब्दों में, “मतदाता द्वारा राज्य को सौंपा गया प्रत्येक नया कर्तव्य और शासन द्वारा प्राप्त की गई प्रत्येक अतिरिक्त शक्ति ने कार्यपालिका की सत्ता और महत्त्व में वृद्धि की है।”

कार्यपालिका का महत्त्व

कार्यपालिका शक्ति का प्राथमिक अर्थ है विधानमण्डल द्वारा अधिनियन्त्रित कानूनों का पालन कराना। किन्तु आधुनिक राज्य में यह कार्य उतना साधारण नहीं जितना कि अरस्तू के युग में था। राज्यों के कार्यों में अनेक गुना विस्तार हो जाने के कारण व्यवहार में सभी अवशिष्ट कार्य कार्यपालिका के हाथों में पहुँच गये हैं तथा इसकी महत्ता दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही है। आज कार्यपालिका प्रशासन की वह शक्ति है जिससे राज्य के सभी कार्य सम्पादित किये जाते हैं।

आज कार्यपालिका का महत्त्व इस कारण भी है कि नीति-निर्धारण तथा उसकी कार्य में परिणति, व्यवस्था बनाये रखना, सामाजिक तथा आर्थिक कल्याण का प्रोन्नयन, विदेश नीति का मार्गदर्शन, राज्य का साधारण प्रशासन चलाना आदि सभी महत्त्वपूर्ण कार्य, कार्यपालिका ही सम्पादित करती है।

प्रश्न 3.

भारत में राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए किस प्रणाली को अपनाया जाता है? उनके (राष्ट्रपति) केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के साथ सम्बन्धों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

उत्तर :

राष्ट्रपति का निर्वाचन

भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रीति से होता है। उसके निर्वाचन के लिए एक निर्वाचक मण्डल बनाया जाता है, जिसमें संसद के निर्वाचित सदस्य एवं राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य

होते हैं। यह निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली की एकल-संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा गुप्त मतदान की रीति से होता है।

भारतीय संसद और राज्यों की विधानसभाओं के मनोनीत सदस्यों को राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार नहीं है। राष्ट्रपति के निर्वाचन के सम्बन्ध में दो तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं –

1. राष्ट्रपति के निर्वाचन में राज्यों के प्रतिनिधित्व में एकरूपता (Uniformity) होती है।
2. केन्द्र और राज्यों के प्रतिनिधियों के सम्बन्ध में समान स्थिति को बनाए रखने का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार राष्ट्रपति के निर्वाचन का परिणाम मतों की साधारण गणना से निर्धारित न होकर एक प्रकार से मतों के मूल्य के आधार पर निर्धारित होता है। राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए निर्वाचक मण्डल के सदस्य किस प्रकार और कितने मत देंगे, इसके लिए निम्नलिखित व्यवस्था अपनाई गई है –

1. संसद के सदस्यों के मतों और राज्यों की विधानसभाओं के कुल सदस्यों के मतों में समानता स्थापित करने के लिए संविधान बनाने वालों ने एक अनोखा तरीका अपनाया है।
2. भारत संघ में सम्मिलित राज्यों की जनसंख्या और उनकी विधानसभाओं के सदस्यों की संख्या एकसमान नहीं है और न इन दोनों को अनुपात ही पूर्ण तथा समान है। अतः इस बात को ध्यान में रखकर संविधान बनाने वालों ने प्रत्येक राज्य को समान प्रतिनिधित्व देने के लिए निम्नलिखित व्यवस्था की है –

राज्य की कुल जनसंख्या को राज्य की विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या से भाग देने पर जो भागफल आए उसको 1000 से भाग दिया जाए और उसके पश्चात् जो भागफल आए उतने ही मत राज्य की विधानसभा के सदस्यों को प्राप्त होंगे। सूत्र रूप में –

$$\frac{\text{राज्यों की कुल जनसंख्या}}{\text{राज्य की विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या}} + 1000$$

भारतीय संसद के प्रत्येक सदस्य को कितने मत प्राप्त होंगे, उसकी व्यवस्था निम्न प्रकार की गई है। भारत संघ में सम्मिलित सदस्य राज्यों की विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों के मतों के योग को संसद के निर्वाचित सदस्यों की संख्या से भाग देने पर जो भागफल आए, उतने मत संसद के निर्वाचित सदस्य को देने का अधिकार प्राप्त होगा। यह निम्न प्रकार है –

संसद के प्रत्येक सदस्य के मत का मूल्य

$$= \frac{\text{राज्यों की विधानसभाओं के सभी सदस्यों की मत संख्या}}{\text{संसद के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या}}$$

राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए एकल संक्रमणीय मत प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। इस प्रणाली में उम्मीदवार को विजयी होने के लिए निश्चित मत प्राप्त करना आवश्यक है। निश्चित मत प्राप्त करने का सूत्र अग्रलिखित है –

$$\frac{\text{कुल डाले गए मतों की संख्या}}{\text{निर्वाचित होने वाले उम्मीदवारों की संख्या} + 1} + 1$$

काल्पनिक उदाहरण – यदि किसी राज्य की कुल जनसंख्या 5,00,00,000 है तथा निर्वाचित विधानसभा सदस्यों की संख्या 500 है, तो एक निर्वाचित विधानसभा सदस्य (एम०एल०ए०) के मत का मूल्य

$$= \frac{5,00,00,000}{500} + 1000$$

$$= \frac{5,00,000}{1000} = 500$$

एक संसद सदस्य (एम०पी०) के मत का मूल्य—यदि राज्यों की विधानसभाओं के कुल निर्वाचित सदस्यों के मतों की कुल संख्या 6,00,00,000 है तथा निर्वाचित एम०पी० 500 हैं, तो एक एम०पी० के मत का मूल्य

$$= \frac{6,00,00,000}{500} = 1,20,000$$

निर्धारित कोटा – किसी भी प्रत्याशी को विजयी होने के लिए स्पष्ट बहुमत प्राप्त होना अति आवश्यक है। उसे कुल वैध मतों का आधे से अधिक भाग प्राप्त होना चाहिए। उदाहरण के लिए कुल वैध मत 5,00,000 हैं तो वह उम्मीदवार विजयी मान जाएगा, जो 2,50,001 या इससे अधिक मत प्राप्त करेगा।

मतदान प्रक्रिया एवं मतगणना – राष्ट्रपति पद के लिए कोई भी भारतीय नागरिक, जो निर्धारित योग्यताएँ रखता हो, चुनाव लड़ सकता है। किन्तु शर्त यह है कि उम्मीदवार का नाम 50 निर्वाचित सदस्यों द्वारा प्रस्तावित होना चाहिए और कम-से-कम 50 निर्वाचकों द्वारा उसके नाम का समर्थन होना आवश्यक है।

नामांकन के बाद निश्चित तिथि पर निर्धारित प्रक्रिया द्वारा संसद सदस्य और विधानमण्डलों के सदस्य मतदान करते हैं। प्रत्येक निर्वाचक उम्मीदवारों के नामों (चिह्न सहित) पर अपनी प्राथमिकताएँ 1, 2, 3,

4 अंकित करता है। इसके बाद मतगणना होती है। मतगणना के प्रथम चक्र में उम्मीदवारों को मिली पहली प्राथमिकता को गिना जाता है। यदि किसी उम्मीदवार को इस चक्र की गणना में ही निर्धारित कोटे से अधिक मत मिल जाते हैं, तो उसे विजयी घोषित कर दिया जाता है, अन्यथा दूसरे चक्र की मतगणना की जाती है।

इस गणना में उम्मीदवारों की मिली द्वितीय प्राथमिकता को गिना जाता है। इस गणना में यदि किसी उम्मीदवार को मिले मत बहुत कम सेते हैं और ऐसा अनुभव किया जाता है कि उसके विजयी होने की कोई सम्भावना नहीं है, तो उस स्थिति में उसके मतों को अन्य उम्मीदवारों के लिए हस्तान्तरित कर दिया जाता है। यदि इस चक्र में कोई उम्मीदवार निर्धारित कोटे से अधिक मत प्राप्त कर लेता है, तो उसे विजयी घोषित कर दिया जाता है। यह मतगणना तथा मतों के हस्तान्तरण का सिलसिला उस समय तक चलता रहता है, जब तक कि कोई उम्मीदवार निर्धारित मत प्राप्त नहीं कर लेता है। अन्ततः दो उम्मीदवार ही शेष रह जाते हैं। इनमें से जिसे सबसे अधिक मत प्राप्त होते हैं, उसे बहुमत के आधार पर विजयी घोषित कर दिया जाता है। राष्ट्रपति के निर्वाचन की व्यवस्था व संचालन चुनाव आयोग करता है। राष्ट्रपति के चुनाव से सम्बन्धित सभी विवाद केवल उच्चतम न्यायालय ही निर्णीत करता है।

मंत्रिपरिषद् एवं राष्ट्रपति का सम्बन्ध

भारत में कार्यपालिका का अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से मंत्रिपरिषद् का गठन उसको परामर्श देने के लिए किया जाता है, किन्तु वास्तविक स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। मंत्रिपरिषद् के निर्णय एवं परामर्श राष्ट्रपति को मानने ही पड़ते हैं। यद्यपि राष्ट्रपति इनके सम्बन्ध में अपनी व्यक्तिगत असहमति प्रकट कर सकता है, किन्तु वह मंत्रिपरिषद् के निर्णयों को मानने के लिए बाध्य होता है। भारतीय संविधान में किए गए 42वें तथा 44वें संविधान संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् का परामर्श कानूनी दृष्टिकोण से मानने के लिए बाध्य है। वह मंत्रिपरिषद् से केवल पुनर्विचार के लिए आग्रह ही कर सकता है। वह मंत्रिपरिषद् की नीतियों को किस रूप में प्रभावित करता है, यह उसके व्यक्तित्व पर निर्भर है। मंत्रिपरिषद् को लिए गए समस्त निर्णयों से राष्ट्रपति को अवगत कराया जाता है तथा राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् से किसी भी प्रकार की सूचना माँग सकता है। राष्ट्रपति ही मंत्रिपरिषद् का गठन करता है तथा उसको शपथ ग्रहण कराती है। प्रधानमंत्री के परामर्श पर वह किसी भी मंत्री को पदच्युत कर सकता है।

प्रश्न 4.

भारत के राष्ट्रपति के संकटकालीन अधिकारों की विवेचना कीजिए व संविधान में उसके महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

या

भारत में आपातकाल की घोषणा किन परिस्थितियों में की जाती है? इस घोषणा के क्या परिणाम होते हैं।

या

भारत के राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियाँ बताइए। क्या संकटकालीन स्थितियों में भारत का राष्ट्रपति तानाशाह बन सकता है?

या

भारतीय संघ के राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों का वर्णन कीजिए।

या

भारतीय राष्ट्रपति की शक्तियों एवं उसकी संवैधानिक स्थिति का मूल्यांकन कीजिए।

या

अनुच्छेद 360 के पीछे मुख्य उद्देश्य क्या है? या राष्ट्रपति एक शक्तिहीन औपचारिक अध्यक्ष मात्र है। इस कथन की समीक्षा कीजिए।

या

भारत के राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति का वर्णन कीजिए।

उत्तर :

राष्ट्रपति के संकटकालीन अधिकार

सामान्य परिस्थितियों में भारतीय राष्ट्रपति की स्थिति एक संवैधानिक अध्यक्ष की होती है तथा वह अपनी समस्त शक्तियों का प्रयोग मंत्रि-परिषद् के परामर्श से करता है, किन्तु संविधान निर्माताओं ने संकटकाल का सामना करने के लिए संविधान के 18वें भाग में संकटकालीन धाराओं का वर्णन किया है, जिनके अनुसार संकटकाल की स्थिति में राष्ट्रपति देश का सर्वेसर्वा बन जाता है। फिर भी यह अपेक्षा की जाती है कि संकटकाल में राष्ट्रपति अपने अधिकारों का प्रयोग देश के हित को ध्यान में रखकर ही करेगा।

संविधान के अनुच्छेद 352, 356 तथा 360 में तीन प्रकार के संकटों का वर्णन किया गया है, जो निम्नलिखित हैं

1. युद्ध, बाह्य आक्रमण तथा सशस्त्र विद्रोह की स्थिति में
2. राज्यों में संवैधानिक तन्त्र की विफलता की स्थिति में।
3. देशव्यापी वित्तीय संकट उत्पन्न होने पर।

1. युद्ध, बाह्य आक्रमण तथा सशस्त्र विद्रोह की स्थिति में

अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत यदि राष्ट्रपति को यह अनुभव हो कि युद्ध, बाहरी आक्रमण व आन्तरिक अशान्ति के कारण भारत या उसके किसी भाग की शान्ति भंग होने का भय है तो राष्ट्रपति को संकटकालीन घोषणा करने के अधिकार प्राप्त हैं। संविधान में किये गये 44वें संशोधन के द्वारा राष्ट्रपति के इस अधिकार के सम्बन्ध में कुछ प्रमुख प्रावधान किये गये हैं, जो निम्नलिखित हैं –

(अ) 44वें संशोधन द्वारा की गयी व्यवस्थाओं के माध्यम से वर्तमान समय में राष्ट्रपति युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह होने या इसकी आशंका होने पर ही आपातकालीन घोषणा कर सकता है। अब राष्ट्रपति के द्वारा केवल आन्तरिक अशान्ति के नाम पर आपातकाल की घोषणा नहीं की जा सकती।

(ब) इस संशोधन के एक अन्य प्रावधान में यह व्यवस्था की गयी है कि राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत आपातकाल की घोषणा तभी की जा सकती है जब मंत्रिमण्डल लिखित रूप से राष्ट्रपति को परामर्श दे।

(स) राष्ट्रपति द्वारा यह घोषणा करने के 1 माह के अन्दर संसद के दोनों सदनों के 2/3 बहुमत से प्रस्ताव को अनुमोदित होना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार राष्ट्रपति शासन को 6 माह तक लागू रखा जा सकता है। इससे अधिक अवधि के लिए लागू किये जाने पर, प्रति 6 माह पश्चात् उसे संसद की पुनः स्वीकृति प्राप्त होनी अत्यन्त आवश्यक होती है।

घोषणा के प्रभाव – राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 352 के अधीन की जाने वाली आपातकालीन घोषणा के अन्तर्गत संविधान द्वारा नागरिकों को अनुच्छेद 19 के द्वारा दी जाने वाली स्वतंत्रताओं को स्थगित कर दिया जाता है, परन्तु 44वें संशोधन के द्वारा नागरिकों के जीवन और दैनिक स्वतंत्रता के अधिकार को समाप्त या सीमित नहीं किया जा सकेगा। इसके अतिरिक्त आपातकालीन स्थिति में हमारा संविधान एकात्मक शासन का रूप धारण कर लेता है तथा राज्य सरकारें अपनी शक्तियों का प्रयोग केंद्रीय सरकार के निर्देशानुसार करती हैं। इस स्थिति में राष्ट्रपति संघ और राज्यों के बीच आय के वितरण सम्बन्धी किसी उपबन्ध को संशोधित कर सकता है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अब तक युद्ध तथा बाहरी आक्रमण के कारण 1962 ई० में तथा 1971 ई० में आपातकाल की घोषणा की गयी थी। 1975 ई० में श्रीमती इन्दिरा गांधी के समय आन्तरिक अव्यवस्था उत्पन्न होने की आशंका को लेकर देश में आपातकाल की घोषणा की गयी थी।

2. राज्यों में संवैधानिक तन्त्र की विफलता की स्थिति में

संविधान के अनुच्छेद 356 के अनुसार, “राज्यों में संवैधानिक तन्त्र के विफल होने पर राष्ट्रपति राज्यपाल के प्रतिवेदन या अन्य किसी प्रकार से यह निश्चित होने पर कि राज्य में प्रशासन संविधान के अनुसार कार्य नहीं कर रहा है, आपातकाल की घोषणा कर सकता है। इस घोषणा को भी राष्ट्रपति प्रथम घोषणा के सट्टा ही लागू करता है। 42वें संशोधन के द्वारा यद्यपि इस घोषणा की अवधि को 6 माह से बढ़ाकर 1 वर्ष किया गया था, परन्तु 44वें संशोधन के द्वारा इसे पुनः 6 माह कर दिया गया है। भारत में राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 356 का प्रयोग अब तक विभिन्न राज्यों में 115 बार किया जा चुका है। जिनमें उत्तर प्रदेश, बिहार आदि राज्य प्रमुख हैं।

घोषणा के प्रभाव – राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत की जाने वाली घोषणा के निम्नलिखित प्रभाव पड़ते हैं –

1. राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 356 को किसी राज्य में लागू करने पर राज्य की समस्त विधायिका शक्तियों का प्रयोग केन्द्र द्वारा किया जाता है।
2. राष्ट्रपति द्वारा इस स्थिति में किसी भी राज्याधिकारी की कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ हस्तगत कर ली जाती हैं।
3. उच्च न्यायालय की शक्तियों के अतिरिक्त राज्य से सम्बन्धित समस्त शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा किया जा सकता है।
4. लोकसभा की बैठक न होने की स्थिति में राष्ट्रपति राज्य की संचित निधि से, बिना लोकसभा की स्वीकृति के, व्यय की अनुमति दे सकता है।
5. राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त नागरिकों के मौलिक अधिकारों को भी प्रतिबन्धित किया जा सकता है।

3. देशव्यापी वित्तीय संकट उत्पन्न होने पर

अनुच्छेद 360 के अनुसार राष्ट्रपति को वित्तीय आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार प्रदान किया है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत यदि राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाए कि भारत की वित्तीय साख को खतरा है, तो राष्ट्रपति राष्ट्र में वित्तीय आपातकाल की घोषणा कर सकता है।

घोषणा के प्रभाव – वित्तीय आपात की घोषणा करने पर राष्ट्रपति संघ तथा राज्याधिकारियों के वेतन में कटौती कर सकता है। वह सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतन में भी कटौती कर सकता है। इसके अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित सभी वित्त विधेयक इस स्थिति में राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। राष्ट्रपति केन्द्र व राज्य सरकारों के मध्य धन सम्बन्धी विषयों के वितरण के प्रावधानों में संशोधन भी कर सकता है। इस घोषणा को लागू करने पर राष्ट्रपति द्वारा नागरिकों के मौलिक अधिकारों (अनुच्छेद 19) को प्रतिबन्धित किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति नागरिकों के संवैधानिक उपचारों के अधिकारों को भी स्थगित कर सकता है। वित्तीय घोषणा के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि भारत में अभी तक एक बार भी वित्तीय आपात की घोषणा नहीं की गयी है।

राष्ट्रपति की वास्तविक स्थिति तथा महत्त्व

भारतीय राष्ट्रपति की वास्तविक स्थिति पर्याप्त विवादग्रस्त रही है। संसदीय शासन-प्रणाली के कारण राष्ट्रपति वैधानिक प्रधान है। संविधान के प्रारूप को प्रस्तुत करते हुए डॉ॰ अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था-“राष्ट्रपति की वही स्थिति है जो इंग्लैण्ड के संविधान में वहाँ के सम्राट की है। वह राष्ट्र का प्रधान है, कार्यपालिका का नहीं। वह प्रतिनिधित्व करता है, उस पर शासन नहीं करता है। वह साधारणतः मंत्रियों के परामर्श मानने लिए विवश होगा। वह उनके परामर्श के विरुद्ध तथा उनके बिना कुछ नहीं कर सकता।”

इस प्रकार वास्तविक कार्यपालिका शक्तियाँ मंत्रिमण्डल में निहित हैं। संविधान द्वारा जो शक्तियाँ राष्ट्रपति को दी गयी हैं, उनका प्रयोग व्यवहार में प्रधानमंत्री व मंत्रिमण्डल करता है। राष्ट्रपति का पद शक्तिहीन होने के कारण कुछ लोगों का कहना है कि राष्ट्रपति का पद महत्वहीन है। यह विचार सही नहीं है। संसदीय प्रणाली में राष्ट्रपति पद का विशेष महत्व है। यह निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट है –

1. वह राष्ट्र का प्रतीक है।
2. वह व्यक्तिगत रूप से कई कार्य करता है।
3. वह संक्रमण काल में व्यवस्था तथा स्थायित्व बनाये रखता है।
4. वह संकटकाल में राष्ट्र का नेतृत्व करता है।
5. वह लोकतंत्र को प्रहरी तथा रक्षक है।
6. वह अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि यद्यपि राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालिका नहीं है, फिर भी वह भारतीय शासन का महत्वपूर्ण अंश है। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी कहा था- “हमने अपने राष्ट्रपति को वास्तविक शक्ति नहीं दी है, वरन् हमने उसके पद को सत्ता व प्रतिष्ठा से विभूषित किया है। वह भारतीय शासन-व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। उसके बिना देश का शासन सुचारु रूप से नहीं चल सकता। 42वें तथा 44वें संशोधनों द्वारा राष्ट्रपति के अधिकारों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण संशोधन किये गये हैं। अब राष्ट्रपति को मंत्रि-परिषद् के परामर्शानुसार कार्य करना होगा। वह मंत्रि-परिषद् से पुनर्विचार के लिए आग्रह कर सकता है और मंत्रि-परिषद् के पुनर्विचार को मानने के लिए बाध्य है।

क्या राष्ट्रपति तानाशाह बन सकता है ?

या राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों का मूल्यांकन

कुछ आलोचकों का यह मानना है कि संकटकालीन अवस्था में राष्ट्रपति को इतनी अधिक शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं कि वह एक निरंकुश शासक अथवा तानाशाह बन सकता है।

श्री हरिविष्णु कामथ ने तो संविधान सभा में इस व्यवस्था को स्वीकार किये जाने वाले दिन को शर्मनाक दिन बताया है। श्री अमरनन्दी के अनुसार, “राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियाँ उसके हाथों में भरी बन्दूक के समान हैं जिनका प्रयोग वह लोगों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अथवा इनको विनष्ट करने के लिए कर सकता है। उसके अधिकारों को देखकर प्रसिद्ध विद्वान् एलेन ग्लेडहिल ने लिखा है- “कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में भारत का राष्ट्रपति तानाशाह बन सकता है, परन्तु यदि किंचित गहनता से विचार किया जाए तो व्यावहारिक रूप से यह बात उचित नहीं है। शायद ही कोई ऐसा राष्ट्रपति होगा जो अपने संकटकालीन अधिकारों का वास्तविक उपयोग करेगा।” संकटकालीन अधिकारों के विषय में डॉ०

महादेव प्रसाद शर्मा ने लिखा है – “राष्ट्रपति के अधिकारों की सूची कागज पर अत्यन्त विस्तृत प्रतीत होती है और इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है कि यदि राष्ट्रपति अपनी इन शक्तियों का वास्तविक उपयोग कर सके तो वह संसार का सबसे बड़ा स्वेच्छाचारी शासक होगा।”

उपर्युक्त आलोचनौओं में सत्य को कुछ अंश अवश्य है, परन्तु ये आलोचनाएँ अतिशयोक्तिपूर्ण भी हैं, क्योंकि संकटकालीन अवस्था केवल कुछ परिस्थितियों के लिए ही होती है। इस सम्बन्ध में टी० टी० कृष्णामाचारी का विचार है-“यदि कार्यपालिका अपनी संकटकालीन शक्तियों का दुरुपयोग करती है तो संसद उसे सबक दे सकती है। हम जानते हैं कि विधायिका में जन-प्रतिनिधि होते हैं जिन्हें प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद जनता के समक्ष अपने पक्ष में मतदान करने का आग्रह करना होता है। ऐसी स्थिति में संकटकालीन घोषणा में कार्यपालिका एवं विधायिका किसी के भी निरंकुश होने की आशंका केवल नाममात्र की होती है।

संविधान के 42वें संशोधन के बाद तो भय अथवा आशंका भी पूर्णतः समाप्त हो गयी है। इस संशोधन के द्वारा यह व्यवस्था कर दी गयी है कि राष्ट्रपति मंत्रिमण्डल के परामर्श को मानने के लिए बाध्य होगा। संविधान के 44वें संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति अधिक-से-अधिक मंत्री-परिषद् से पुनर्विचार के लिए आग्रह कर सकता है और अन्ततः वह मंत्रीपरिषद् के द्वारा किये गये पुनर्विचार को मानने के लिए बाध्य है। इसलिए अब यह निश्चित हो गया है कि राष्ट्रपति संकटकाल में भी तानाशाह कदापि नहीं बन सकता। राष्ट्रपति तभी तानाशाह बन सकता है जब वह मंत्री-परिषद् की सलाह की अवहेलना कर दे। इस स्थिति में संसद के द्वारा उस पर महाभियोग लगाया जा सकता है। संविधान को ताक पर रखकर ही राष्ट्रपति तानाशाह बन सकता है। संविधान के दायरे में कार्य करते हुए उसके तानाशाह बन जाने की कोई आशंका नहीं है।

प्रश्न 5.

भारत के राष्ट्रपति की शक्तियों का परीक्षण कीजिए।

या

राष्ट्रपति की वित्तीय शक्तियों का वर्णन कीजिए।

या

“भारत का राष्ट्रपति संघीय कार्यपालिका का संवैधानिक प्रधान है।” इस कथन की समीक्षा कीजिए।

या

भारत के राष्ट्रपति के मुख्य कार्यों का संक्षेप में विवेचन कीजिए।

या

अध्यादेश क्या है? इसे कौन जारी कर सकता है?

या

भारत के राष्ट्रपति की कार्यपालिका और विधायी सम्बन्धी शक्तियों का वर्णन कीजिए।

या

भारत के राष्ट्रपति के कार्यों एवं शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर :

राष्ट्रपति के अधिकार अथवा शक्तियाँ और कार्य

भारतीय संविधान के अनुसार भारत के राष्ट्रपति को बहुत व्यापक अधिकार प्रदान किये गये हैं। भारत संघ की कार्यपालिका शक्तियाँ संविधान की धारा 53 के अनुसार राष्ट्रपति को प्रदान की गयी हैं, जिनका प्रयोग वह स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों की सहायता से कर सकता है। वस्तुतः संसदीय शासन-प्रणाली होने के कारण वह अपनी शक्तियों का प्रयोग अपनी इच्छानुसार न करके मंत्रिमण्डल की सहायता से करता है। राष्ट्रपति के इन अधिकारों को मुख्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है –

(1) सामान्यकालीन शक्तियाँ अथवा अधिकार तथा

(2) संकटकालीन शक्तियाँ अथवा अधिकार।

सामान्यकालीन अधिकारों का वर्णन छः विभागों के अन्तर्गत किया जा सकता है –

1. प्रशासकीय या शासन सम्बन्धी अधिकार।
2. विधायिनी अथवा कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकार।
3. वित्तीय अथवा अर्थ सम्बन्धी अधिकार।
4. न्याय सम्बन्धी अधिकार।
5. विशेषाधिकार।
6. सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श लेने का अधिकार।

(1) प्रशासकीय या शासन-सम्बन्धी अधिकार

भारत संघ का शासन-सम्बन्धी प्रत्येक कार्य राष्ट्रपति के नाम से सम्पन्न होता है। राष्ट्रपति के प्रशासकीय अधिकारों को कई भागों में विभाजित किया जा सकता है, जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है –

(क) पदाधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार – सभी महत्वपूर्ण नियुक्तियाँ राष्ट्रपति द्वारा की जाती हैं। संविधान के अनुच्छेद 75 (1) के अनुसार वह संसद में बहुमत दल के नेता की नियुक्ति प्रधानमंत्री के पद पर करता है तथा प्रधानमंत्री के परामर्श से अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है। एटार्नी जनरल, महालेखा परीक्षक, संघीय लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा दूसरे सदस्य, यदि राज्यों का संयुक्त लोक सेवा आयोग हो तो उनका प्रधान तथा दूसरे सदस्य, सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य

न्यायाधीशों और उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों, विदेशों को भेजे जाने वाले राजदूतों, राज्यों के राज्यपालों तथा केंद्रीय क्षेत्रों का शासन-प्रबन्ध चलाने के लिए चीफ कमिशनर तथा उपराज्यपाल आदि की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। राष्ट्रपति को कई प्रकार के आयोगों; जैसे कि भाषा-आयोग, वित्त-आयोग, चुनाव-आयोग तथा पिछड़े वर्गों के सम्बन्ध में आयोग गठित करने का अधिकार प्राप्त है।

(ख) राज्यों के नीति-निर्देशन का अधिकार – जैसा पहले बताया जा चुका है कि राष्ट्रपति राज्यों के राज्यपालों एवं मुख्य आयुक्तों आदि की नियुक्ति करता है और इनके माध्यम से राज्यों की नीति का निर्देशन करता है तथा राज्यों पर अपना नियन्त्रण रखता है। यदि राष्ट्रपति यह समझता है कि किसी प्रदेश में संवैधानिक शासन-तन्त्र असफल हो रहा है तो उस प्रदेश के समस्त प्रशासकीय अधिकार अपने नियन्त्रण में ले लेता है।

(ग) सैनिक अधिकार – राष्ट्रपति राष्ट्र की सशस्त्र सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति है। वह थल, जल, वायु सेनाध्यक्षों की नियुक्ति करता है। वह फील्ड मार्शल की उपाधि भी प्रदान करता है। वह राष्ट्रीय रक्षा समिति का अध्यक्ष होता है। राष्ट्रपति को युद्ध और शान्ति की घोषणा करने का अधिकार है, किन्तु वह इन अधिकारों का प्रयोग कानून के अनुसार ही कर सकता है तथा इसके लिए उसे संसद की स्वीकृति लेनी आवश्यक है।

(घ) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के अधिकार – अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करना भी राष्ट्रपति का कार्य है। वह विदेशों से सन्धियाँ एवं राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा व्यापारिक समझौते सम्पन्न करता है। विदेशों से आये हुए राजदूतों के प्रमाण-पत्रों की जाँच भी राष्ट्रपति ही करता है तथा विदेशों में अपने देश के राजदूतों को नियुक्त करता है। यद्यपि समझौतों आदि की पहल मंत्रियों द्वारा की जाती है तथा इनकी पुष्टि संसद द्वारा आवश्यक है फिर भी ये समझौते राष्ट्रपति के नाम से ही सम्पन्न किये जाते हैं।

(2) विधायिनी अथवा कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकार

राष्ट्रपति संसद का अभिन्न अंग है। संविधान के अनुच्छेद 58 (1) व (2) के अन्तर्गत वह संसद को आमंत्रित करने, स्थगित करने और लोकसभा को भंग करने के अधिकार का प्रयोग कर सकता है। राष्ट्रपति को अनेक विधायिनी शक्तियाँ भी प्राप्त हैं, जिनका उल्लेख निम्नवत् है –

(क) सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार – राष्ट्रपति को राज्यसभा के लिए ऐसे 12 सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार है जो साहित्य, कला, विज्ञान अथवा किसी अन्य क्षेत्र में पारंगत हों। इसके अतिरिक्त वह लोकसभा में भी 2 आंग्ल-भारतीय सदस्यों को मनोनीत कर सकता है।

(ख) संसद का अधिवेशन बुलाने एवं सन्देश भेजने का अधिकार – संविधान द्वारा संसद के दोनों सदनों को अधिवेशन बुलाने का अधिकार राष्ट्रपति को दिया गया है। राष्ट्रपति संसद के दोनों सदनों को अलग-अलग अथवा एक साथ सम्बोधित कर सकता है अथवा उन्हें सन्देश भेज सकता है।

(ग) राज्यों के विधानमण्डलों पर अधिकार – राष्ट्रपति का अधिकार राज्यों के विधानमण्डलों पर भी होता है। राज्यों के विधानमण्डलों के किसी कार्य पर प्रतिबन्ध लगाने तथा तत्सम्बन्धी कानून बनाने के सम्बन्ध में राष्ट्रपति की स्वीकृति आवश्यक है। अनेक प्रकार के ऐसे विधेयक होते हैं जो राष्ट्रपति की स्वीकृति के बिना लागू नहीं किये जा सकते।

(घ) विधेयक पारित करने का अधिकार – संसद के द्वारा पारित कोई भी विधेयक तब तक कानून नहीं बन सकता जब तक कि राष्ट्रपति उस पर अपनी स्वीकृति न दे दे। यह राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह किसी विधेयक पर हस्ताक्षर करे अथवा न करे। धन विधेयक के अतिरिक्त वह किसी भी विधेयक को संसद में पुनः विचार के लिए वापस भेज सकता है। यह संसद की स्वेच्छा पर होगा कि वह राष्ट्रपति द्वारा की गयी सिफारिशों को माने अथवा न माने। संसद राष्ट्रपति की सिफारिशों पर विचार करके राष्ट्रपति को विधेयक पुनः भेजती है और राष्ट्रपति को उस पर अपनी स्वीकृति देनी ही पड़ती है। सभी धन विधेयक राष्ट्रपति की सिफारिशों के पश्चात् ही संसद में प्रस्तुत किये जाते हैं।

(ङ) अध्यादेश जारी करने का अधिकार – संविधान के अनुच्छेद 123 (1) के अनुसार आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रपति अध्यादेश भी जारी कर सकता है। यह कार्य वह तभी करता है जब संसद को अधिवेशन न हो रहा हो। राष्ट्रपति के द्वारा जारी किये गये अध्यादेशों की शक्ति तथा प्रभाव वैसा ही होगा जैसा कि अन्य अधिनियमों का होता है। संसद को अधिवेशन प्रारम्भ होने पर इन अध्यादेशों का अनुमोदन कराना होता है। संसद का अधिवेशन प्रारम्भ होने की तिथि से 6 सप्ताह तक ही यह अध्यादेश लागू रह सकता है, किन्तु यदि संसद चाहे तो उसके द्वारा इस अवधि से पूर्व भी इन अध्यादेशों को समाप्त किया जा सकता है। राष्ट्रपति भी किसी अध्यादेश को किसी भी समय वापस ले सकता है। अनुसूचित क्षेत्रों में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए नियम बनाने का अधिकार भी राष्ट्रपति को प्राप्त है।

(च) लोकसभा को भंग करने का अधिकार – लोकसभा की अवधि 5 वर्ष है, परन्तु राष्ट्रपति निश्चित अवधि से पूर्व भी लोकसभा को भंग कर सकता है। राष्ट्रपति अपनी इस शक्ति का प्रयोग प्रधानमंत्री के परामर्श से करता है। भारत में ऐसा कई बार हो चुका है।

(3) वित्तीय अथवा अर्थ सम्बन्धी अधिकार

भारत के राष्ट्रपति को वित्तीय अधिकार भी प्रदान किये गये हैं। इन अधिकारों का अध्ययन निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है –

(क) बजट उपस्थित कराने का अधिकार – प्रत्येक वित्तीय वर्ष के प्रारम्भ में राज्य की आय-व्यय का वार्षिक बजट वित्तमंत्री के माध्यम से राष्ट्रपति ही संसद के समक्ष प्रस्तुत करवाता है। बजट में सरकार की वर्षभर की आय तथा व्यय के अनुमानित आँकड़े प्रस्तुत किये जाते हैं।

(ख) कर एवं अनुदान सम्बन्धी अधिकार – राष्ट्रपति नये करों को लगाने अथवा प्रचलित करों को समाप्त करने की सिफारिश कर सकता है। विशिष्ट कार्यों को करने हेतु राष्ट्रपति अनुदान की माँग भी कर सकता

है। राष्ट्रपति की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई भी वित्त विधेयक या अनुदान माँग लोकसभा में प्रस्तुत नहीं की जा सकती है।

(ग) आयकर से प्राप्त आय तथा पटसन के निर्यात से प्राप्त आय का वितरण – राष्ट्रपति ही आयकर से होने वाली आय में विभिन्न राज्यों के भाग को निर्धारित करता है तथा यह भी निश्चित करता है कि पटसन के निर्यात कर की आय में से कुछ राज्यों को बदले में क्या धनराशि मिलनी चाहिए।

(घ) वित्त आयोग की नियुक्ति का अधिकार – भारतीय संविधान की धारा 280 के अनुसार वित्त से सम्बन्धित समस्याओं को हल करने के लिए राष्ट्रपति एक वित्त आयोग की नियुक्ति कर सकता है। इसकी नियुक्ति प्रति 5 वर्ष पश्चात् की जाती है। यह आयोग वित्त सम्बन्धी समस्त समस्याओं पर विचार करके उनका समाधान प्रस्तुत कर सकता है।

(4) न्याय सम्बन्धी अधिकार

राष्ट्रपति को न्याय सम्बन्धी भी कुछ अधिकार प्रदान किये गये हैं। राष्ट्रपति ही सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। संसद के प्रस्ताव पर उन्हें पदच्युत भी कर सकता है। राष्ट्रपति को किसी भी अपराध को क्षमादान करने का अधिकार है। मृत्यु-दण्ड प्राप्त किसी भी व्यक्ति को वह क्षमा करके जीवनदान दे सकता है। किसी भी अपराधी के दण्ड को क्षमा करने, कम करने, स्थगित करने तथा अन्य किसी दण्ड में बदलने का भी उसे अधिकार है, परन्तु शर्त यह है कि यह दण्ड सैनिक न्यायालय द्वारा न दिया गया हो।

(5) विशेषाधिकार

भारतीय संविधान ने राष्ट्रपति को कुछ विशेषाधिकार (Immunities) भी प्रदान किये हैं। यद्यपि भारतीय संघ के समस्त कार्य राष्ट्रपति के नाम से होते हैं, किन्तु वह अपने शासन सम्बन्धी और शासकीय कार्यों के लिए किसी न्यायालय के प्रति उत्तरदायी न होगा। न तो उसके विरुद्ध किसी न्यायालय में कार्यवाही की जा सकती है और न उसकी गिरफ्तारी के लिए कोई वारंट जारी किया जा सकता है।

(6) सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श लेने का अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 143 के अनुसार सार्वजनिक महत्त्व के किसी प्रश्न पर राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय से कानूनन परामर्श ले सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया परामर्श बाध्यकारी नहीं होता और यह राष्ट्रपति की इच्छा पर है कि वे उस परामर्श को स्वीकार करें अथवा नहीं। इस प्रकार भारत के राष्ट्रपति को शान्तिकाल में विस्तृत शक्तियाँ प्राप्त हैं। शान्तिकाल में वह संवैधानिक अध्यक्ष के रूप में ही कार्य करेगा। हरिविष्णु कामथ ने संविधान निर्मात्री सभा में कहा था— “हम अपने राष्ट्रपति को एक संवैधानिक अध्यक्ष का रूप देना चाहते हैं, हमारी यह अपेक्षा है कि वह संसद की सलाह तथा निर्देश के अनुसार कार्य करेगा।”

प्रश्न 6.

उपराष्ट्रपति की निर्वाचन पद्धति, कार्यकाल, भत्ते एवं योग्यता का उल्लेख कीजिए तथा राज्यसभा के सभापति के रूप में उनकी भूमिका का परीक्षण कीजिए।

या

उपराष्ट्रपति का निर्वाचन कैसे होता है? उसके अधिकार एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर :

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 63 द्वारा भारत संघ के लिए एक उपराष्ट्रपति की व्यवस्था की गयी है। संविधान में इस प्रावधान की आवश्यकता इस हेतु अनुभव की गयी, क्योंकि अनेक अवसर ऐसे हो सकते हैं जब राष्ट्रपति देश में न हो अथवा अन्य किसी कारणवश कार्यभार ग्रहण करने में सक्षम न हो। ऐसी स्थिति में शासन को ठीक से चलाने के लिए उपराष्ट्रपति की व्यवस्था की गयी है।

(1) योग्यताएँ – उपराष्ट्रपति के पद के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए –

(क) वह भारत का नागरिक हो।

(ख) वह 35 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो।

(ग) वह राज्यसभा का सदस्य निर्वाचित होने हेतु निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

(घ) वह संघ सरकार अथवा राज्य सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर कार्य न कर रहा हो।

(2) निर्वाचन – उपराष्ट्रपति का निर्वाचन संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में होता है। यह निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति से एकल संक्रमणीय गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा होता है। पद ग्रहण करने से पूर्व उपराष्ट्रपति को राष्ट्रपति के समक्ष निष्ठा एवं पद की गोपनीयता से सम्बद्ध शपथ ग्रहण करनी होती है।

(3) कार्यकाल – उपराष्ट्रपति का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। वह स्वेच्छा से अवधि से पूर्व भी अपने पद से त्याग-पत्र देकर पदमुक्त हो सकता है। उपराष्ट्रपति अपने पद पर तब तक बना रहता है जब तक कि उसका उत्तराधिकारी पद ग्रहण न कर ले। उपराष्ट्रपति अस्थायी रूप से ही राष्ट्रपति पद धारण कर सकता है। उपराष्ट्रपति का पुनः चुनाव भी हो सकता है संवैधानिक व्यवस्था द्वारा उपराष्ट्रपति को 14 दिन का नोटिस देकर राज्यसभा अपने कुल सदस्यों के बहुमत से उसे पदच्युत करने का प्रस्ताव पारित कर सकती है। यह प्रस्ताव लोकसभा द्वारा अनुमोदित होना आवश्यक है।

(4) वेतन तथा भत्ते – उपराष्ट्रपति का वेतन ₹ 4,00,000 है। इसके अलावा उन्हें केंद्रीय मंत्रियों को मिलने वाली अन्य सुविधाएँ प्राप्त होती हैं।

(5) कार्य तथा अधिकार – उपराष्ट्रपति के कार्य तथा अधिकार निम्नलिखित हैं –

1. वह राज्यसभा का पदेन सभापति होने के कारण राज्यसभा की बैठकों का सभापतित्व करता है।
2. वह सदन में अनुशासन व्यवस्था बनाये रखता है।
3. वह सदन द्वारा स्वीकृत विधेयकों पर हस्ताक्षर करता है।

4. राष्ट्रपति का पद रिक्त होने की स्थिति में वह राष्ट्रपति पद के समस्त कार्य करता है। इस समय वह राज्यसभा का सभापति नहीं रहता है। उपराष्ट्रपति अधिक-से-अधिक 6 माह तक राष्ट्रपति पद पर कार्य कर सकता है। जिस काल में उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति पद पर कार्य करेगा, उसे वे सब उपलब्धियाँ और भत्ते प्राप्त होंगे, जिनका अधिकारी राष्ट्रपति होता है।

प्रश्न 7.

भारतीय शासन में प्रधानमंत्री की स्थिति तथा महत्त्व का वर्णन, विशेष रूप से वर्तमान समय की स्थिति के सन्दर्भ में कीजिए।

या

राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के सम्बन्धों का विवेचन कीजिए।

या

संघीय मंत्रिपरिषद् के गठन का संक्षिप्त वर्णन कीजिए तथा उसमें प्रधानमंत्री की स्थिति का परीक्षण कीजिए।

या

प्रधानमंत्री की शक्तियों तथा स्थिति की विवेचना कीजिए।

या

भारतीय मंत्रिमण्डल की शक्तियों एवं कार्यों का विवेचन कीजिए।

या

भारतीय शासन में प्रधानमंत्री की भूमिका का परीक्षण कीजिए।

या

भारत के प्रधानमंत्री की नियुक्ति कैसे होती है? उसकी शक्तियों का वर्णन कीजिए।

या

भारत के प्रधानमंत्री की शक्तियों और कार्यों का परीक्षण कीजिए।

उत्तर :

संघीय मंत्रिपरिषद्

सैद्धान्तिक रूप से भारतीय संविधान द्वारा समस्त कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित मानी गयी है। राष्ट्रपति को सहायता तथा परामर्श देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् की व्यवस्था की गयी है। मूल संविधान के अनुच्छेद 74 में उपबन्धित है—“राष्ट्रपति को उसके कार्यों के सम्पादन में सहायता एवं परामर्श देने के लिए एक मंत्रि-परिषद् होगी, जिसका प्रमुख प्रधानमंत्री होगा।”

संवैधानिक दृष्टि से राष्ट्रपति वैधानिक प्रधान है, परन्तु वास्तविक कार्यपालिका मंत्रिपरिषद् होती है। मंत्रिपरिषद् संसदात्मक शासन-प्रणाली में शासन का आधार-स्तम्भ होती है। यह कार्यपालिका व व्यवस्थापिका को जोड़ने वाली एक कड़ी है। वास्तव में मंत्रिपरिषद् के ही चारों ओर समस्त राजनीतिक

तन्त्र घूमता है। यह शासन रूपी जहाज को चलाने वाला पहिया है। मंत्रिपरिषद् बहुत प्रभावी तथा महत्त्वपूर्ण संस्था है।

मंत्रिपरिषद् का गठन

मंत्रिपरिषद् की रचना में कुछ सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष निहित हैं। मंत्रिपरिषद् की रचना इस प्रकार होती है –

(1) प्रधानमंत्री की नियुक्ति – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 75 के अनुसार प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा होगी तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री के परामर्श से होगी। सैद्धान्तिक दृष्टि से राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है, किन्तु व्यवहार में इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति की शक्ति बहुत अधिक सीमित होती है। लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री पद पर नियुक्त किया जाता है। किसी भी दल का स्पष्ट बहुमत न होने या बहुमत वाले दल में निश्चित नेता न रहने की स्थिति में राष्ट्रपति स्वविवेक से किसी भी उस व्यक्ति को प्रधानमंत्री नियुक्त कर सकता है, जो लोकसभा में अपना बहुमत सिद्ध कर सके। व्यवहार में 1979, 1984, 1990 और 1996 ई० में ऐसी स्थिति आई, जब राष्ट्रपति ने प्रधानमंत्री की नियुक्ति में अपने विवेक का प्रयोग किया।

(2) प्रधानमंत्री द्वारा मंत्रियों का चयन – मंत्रिपरिषद् के शेष मंत्रियों की नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। प्रधानमंत्री इस सन्दर्भ में पूर्ण स्वतंत्र होता है। वह अपनी रुचि के व्यक्तियों को छाँटकर उनकी सूची राष्ट्रपति के सम्मुख प्रस्तुत करता है। मंत्रियों का चयन करते समय वह राष्ट्र के विभिन्न समुदायों, वर्गों और भौगोलिक क्षेत्रों को उचित प्रतिनिधित्व देने की चेष्टा करता है। साधारणतः राष्ट्रपति इस सूची का अनुमोदन ही करता है। तथा उक्त व्यक्तियों को मंत्री-पद पर नियुक्त कर देता है।

(3) मंत्रिपरिषद् की सदस्य-संख्या – संविधान में मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की संख्या निश्चित नहीं की गयी है। आवश्यकता पड़ने पर मंत्रियों की संख्या बढ़ायी या घटायी जा सकती है। व्यवहार में भारतीय मंत्रिपरिषद् में 35 से लेकर 60 तक सदस्य रहे हैं और मंत्रिमण्डल या कैबिनेट में 12 से लेकर 25 तक सदस्य रहे हैं।

(4) मंत्रियों के पद हेतु आवश्यक योग्यताएँ – संविधान में मंत्रियों की योग्यताओं के सम्बन्ध में कुछ भी उल्लिखित नहीं है। मंत्रिपरिषद् के प्रत्येक मंत्री को संसद के किसी सदन का सदस्य होना आवश्यक होता है। यदि कोई व्यक्ति मंत्री बनते समय संसद-सदस्य नहीं है तो उसे 6 माह के अन्दर किसी भी सदन की सदस्यता प्राप्त करनी अनिवार्य होती है, अन्यथा उसे पदच्युत कर दिया जाता है।

(5) मंत्रियों के कार्य-विभाजन – मंत्रिपरिषद् के गठन के पश्चात् प्रधानमंत्री द्वारा उनके विभागों का विभाजन किया जाता है। वैधानिक दृष्टि से इस सम्बन्ध में प्रधानमंत्री को पूर्ण शक्ति प्राप्त है। एक मंत्री के अधीन प्रायः एक विभाग होता है, किन्तु कभी-कभी एक से अधिक विभाग भी रहते हैं।

(6) मंत्रियों द्वारा शपथ-ग्रहण – पद-ग्रहण करने के पूर्व प्रधानमंत्री सहित सभी मंत्रियों को राष्ट्रपति के समक्ष पद और गोपनीयता की पृथक्-पृथक् शपथ लेनी पड़ती है।

(7) मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल – मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल निश्चित नहीं होती। मंत्रिपरिषद् तब तक अस्तित्व में बनी रहती है जब तक उसे संसद का विश्वास प्राप्त रहता है। मंत्रिपरिषद् लोकसभा के कार्यकाल तक, जो सामान्यतया 5 वर्ष होता है, अपने पद पर बनी रहती है। व्यक्तिगत रूप से किसी भी मंत्री का कार्यकाल उसके प्रति प्रधानमंत्री के विश्वास पर निर्भर करता है।

(8) मंत्रियों के स्तर – मंत्रिपरिषद् में तीन स्तर के मंत्री होते हैं, मंत्रिमण्डल अथवा कैबिनेट स्तर के मंत्री, राज्य मंत्री तथा उपमंत्री। कैबिनेट मंत्री का स्तर सबसे ऊँचा होता है। इसके बाद राज्य मंत्री आते हैं जो विशेष विभागों से सम्बन्धित तथा अपने विभागों के अध्यक्ष भी होते हैं। राज्य मंत्रियों के बाद उपमंत्री आते हैं जो अपने से ज्येष्ठ मंत्री के अधीन रहते हुए उसकी सहायता करते हैं।

उपर्युक्त तीनों स्तरों के मंत्रियों को सामूहिक रूप में मंत्रिपरिषद् के नाम से पुकारा जाता है, किन्तु मंत्रिमण्डल मंत्रिपरिषद् के अन्तर्गत एक छोटा समूह है जिसमें केवल प्रथम स्तर के मंत्री ही सम्मिलित रहते हैं।

(9) सामूहिक उत्तरदायित्व – केंद्रीय मंत्रिपरिषद् सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है। मंत्रिगण व्यक्तिगत रूप से तो संसद के प्रति उत्तरदायी होते ही हैं, किन्तु सामूहिक रूप से प्रशासनिक नीति और समस्त प्रशासनिक कार्यों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। सम्पूर्ण मंत्रिपरिषद् एक इकाई के रूप में कार्य करती है, इससे मंत्रिपरिषद् को एक संगठित शक्ति का रूप मिला है, जिसके आधार पर उसे राष्ट्रपति और संसद के सम्मुख अधिक सुदृढ़ स्थिति प्राप्त हो जाती है। एक मंत्री के विरुद्ध अविश्वास का मत पारित होने पर सम्पूर्ण मंत्रिपरिषद् को त्याग-पत्र देना पड़ता है।

प्रधानमंत्री के कार्य और शक्तियाँ

वर्तमान समय में प्रधानमंत्री की शक्तियाँ इतनी बढ़ गयी हैं कि कुछ लोग भारत की शासन-व्यवस्था को संसदीय शासन या मंत्रिमण्डलात्मक शासन ही नहीं, वरन् प्रधानमंत्री का शासन कहते हैं। प्रधानमंत्री के कार्य तथा शक्तियों का विवरण निम्नलिखित है –

(1) मंत्रिपरिषद् का निर्माण करना – प्रधानमंत्री अपना पद-ग्रहण करने के तुरन्त बाद मंत्रिपरिषद् का निर्माण करता है। इस सम्बन्ध में प्रधानमंत्री को पर्याप्त छूट रहती है। प्रधानमंत्री ही मंत्रिपरिषद् में मंत्रियों की संख्या निर्धारित करता है। वह चाहे तो अपने दल और संसद के बाहर के व्यक्तियों को भी मंत्रिपरिषद् में सम्मिलित कर सकता है, परन्तु ऐसे व्यक्तियों के लिए 6 माह के अन्दर ही संसद के किसी भी सदन का सदस्य होना आवश्यक है।

(2) मंत्रियों के विभागों का बँटवारा और परिवर्तन – मंत्रियों के बीच शासन-सम्बन्धी विविध भागों का बँटवारा प्रधानमंत्री द्वारा ही किया जाता है। उसके द्वारा किये गये अन्तिम विभाग-वितरण पर

साधारणतया कोई आपत्ति नहीं की जाती। प्रधानमंत्री मंत्रियों के विभागों में जब चाहे परिवर्तन कर सकता है एवं किसी भी मंत्री को उसके आचरण तथा अनुचित कार्यों के कारण त्याग-पत्र देने के लिए बाध्य भी कर सकता है।

(3) लोकसभा का नेता – संसद में बहुमत प्राप्त दल का नेता होने के कारण प्रधानमंत्री संसद का, मुख्यतया लोकसभा का, नेता होता है। विधि-निर्माण के समस्त कार्यों में प्रधानमंत्री ही नेतृत्व प्रदान करता है। वार्षिक बजट सहित सभी सरकारी विधेयक उसके निर्देशानुसार ही तैयार किये जाते हैं। दलीय सचेतक द्वारा वह अपने दल के सदस्यों को आवश्यक आदेश निर्देश देता है। तथा सदन में व्यवस्था बनाये रखने में वह लोकसभा अध्यक्ष की सहायता करता है।

(4) शासन के विभिन्न विभागों में सामंजस्य स्थापित करना – प्रधानमंत्री शासन के विभिन्न विभागों में सामंजस्य स्थापित करता है, जिससे समस्त शासन एक इकाई के रूप में कार्य करता है। इस उद्देश्य से उसके द्वारा विभिन्न विभागों को निर्देश दिये जा सकते हैं और मंत्रियों के विभागों तथा कार्यों में हस्तक्षेप भी किया जा सकता है।

(5) मंत्रिपरिषद् का कार्य-संचालन – प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् की बैठकों का सभापतित्व और मंत्रिमण्डल की समस्त कार्यवाही का संचालन करता है। मंत्रिपरिषद् की बैठक में उन्हीं विषयों पर विचार किया जाता है जिन्हें प्रधानमंत्री एजेण्डा में रखे। यद्यपि मंत्रिपरिषद् में विभिन्न विषयों का निर्णय आपसी सहमति के आधार पर किया जाता है, किन्तु प्रधानमंत्री का निर्णय ही निर्णायक होता है।

(6) नियुक्ति सम्बन्धी कार्य – संविधान द्वारा राष्ट्रपति को उच्च अधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार प्राप्त है, किन्तु व्यवहार में उनकी नियुक्ति राष्ट्रपति प्रधानमंत्री के परामर्श से ही करता

(7) उपाधियाँ प्रदान करना – भारतीय संविधान द्वारा राष्ट्रीय सेवा के उपलक्ष्य में भारतरत्न, पद्मविभूषण, पद्मश्री आदि उपाधियाँ और सम्मान की व्यवस्था की गयी है, किन्तु व्यवहार में ये उपाधियाँ प्रधानमंत्री के परामर्श पर ही प्रदान की जाती हैं।

(8) अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का प्रतिनिधित्व – भारतीय प्रधानमंत्री का स्थान अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। चाहे विदेश विभाग प्रधानमंत्री के हाथ में हो या न हो, फिर भी अन्तिम रूप से विदेश नीति का निर्णय प्रधानमंत्री ही करता है।

(9) शासन का प्रमुख प्रवक्ता – प्रधानमंत्री देश तथा विदेश में शासन की नीति का प्रमुख तथा अधिकृत प्रवक्ता होता है। यदि कभी संसद में किन्हीं दो मंत्रियों के आपसी विरोधी वक्तव्यों के कारण भ्रम और विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाए तो प्रधानमंत्री का वक्तव्य ही इस स्थिति को स्पष्ट कर सकता है।

(10) देश का सर्वोच्च नेता तथा शासक – प्रधानमंत्री देश का सर्वोच्च नेता तथा शासक होता है। देश का समस्त शासन उसी की इच्छानुसार संचालित होता है। वह व्यवस्थापिका से अपनी इच्छानुसार कानून बनवी सकता है और संविधान में आवश्यक संशोधन भी करवा सकता है।

(11) आम चुनाव प्रधानमंत्री के नाम पर – देश के सामान्य निर्वाचन प्रधानमंत्री के नाम पर ही कराये जाते हैं। इस प्रकार सामान्य निर्वाचन स्वाभाविक रूप से प्रधानमंत्री की प्रतिष्ठा व शक्ति में बहुत वृद्धि कर देते हैं।

प्रधानमंत्री का महत्त्व

देश के शासन में प्रधान के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए रेम्जे म्योर ने लिखा है-“प्रधानमंत्री राज्य (शासन) रूपी जहाज का चालक चक्र है।” प्रधानमंत्री वास्तविक कार्यपालिका का अध्यक्ष होता है जो कि उसी के नेतृत्व में शासन का संचालन करती है। लॉर्ड मार्ले के अनुसार, “प्रधानमंत्री मंत्रिमण्डल के वृत्तखण्ड का मुख्य प्रस्तर है। इस प्रकार देश के शासन की बागडोर प्रधानमंत्री के हाथ में रहती है। उसकी शक्तियों की तुलना अमेरिका के राष्ट्रपति की शक्तियों से की जा सकती है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय शासन-व्यवस्था में प्रधानमंत्री की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है। शासन पर उसका प्रभाव अधिकांशतः उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करता है।

प्रधानमंत्री का राष्ट्रपति के साथ सम्बन्ध

भारतीय शासन-व्यवस्था में प्रधानमंत्री की स्थिति वही है जो ग्रेट ब्रिटेन के प्रधानमंत्री की है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री की भाँति भारतीय प्रधानमंत्री का कार्य भी राज्याध्यक्ष (राष्ट्रपति) को उसके कार्यों में ‘सहयोग’ और ‘परामर्श देना’ है, परन्तु वास्तविकता यह है कि सभी निर्णय स्वयं प्रधानमंत्री द्वारा ही लिये जाते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रिमण्डल का निर्माता, संचालनकर्ता एवं संहारकर्ता है। इसीलिए भारतीय प्रधानमंत्री को मंत्रिपरिषद् रूपी मेहराब का प्रमुख खण्ड कहा जाता है। मंत्रिपरिषद् तथा राष्ट्रपति के आपसी सम्बन्धों को दो दृष्टिकोण से स्पष्ट किया जा सकता है -सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक।। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से स्पष्ट होता है कि मंत्रिपरिषद् राष्ट्रपति को सहायता और परामर्श देने वाली एक समिति है, जिसके परामर्श को मानना राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर करता है।

व्यावहारिक दृष्टि से स्थिति यह है कि उसे मंत्रिपरिषद् का परामर्श मानना ही पड़ता है। व्यवहार में कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग उन्हीं व्यक्तियों के द्वारा किया जा सकता है, जो व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी हों। व्यवस्थापिका के प्रति मंत्रिपरिषद् उत्तरदायी होती है, राष्ट्रपति नहीं। व्यवहार में राष्ट्रपति परामर्श देने का कार्य करता है और निर्णय मंत्रिपरिषद् के द्वारा लिये जाते हैं। 44वें संवैधानिक संशोधन (1978) द्वारा यह स्पष्ट कर दिया गया है-“राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् का परामर्श मानने के लिए बाध्य होगा।”

प्रश्न 8.

केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के कार्यों एवं शक्तियों की विवेचना कीजिए।

या

संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-संघ की मंत्रिपरिषद्।

उत्तर :

संघीय (केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के कार्य एवं शक्तियाँ

संविधान के अनुच्छेद 74 में यह प्रावधान किया गया है—‘राष्ट्रपति को उसके कार्यों के सम्पादन में सहायता एवं परामर्श देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी, जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री होगा।’ मंत्रियों द्वारा राष्ट्रपति को जो परामर्श एवं सहायता दी जाएगी, उसे किसी न्यायालय के सामने विवादित मामले के रूप में प्रस्तुत न किया जा सकेगा। वस्तुतः मंत्रिमण्डल वास्तविक कार्यपालिका होती है और वह राष्ट्रपति के नाम पर देश का शासन चलाती है। राष्ट्रपति की स्थिति रबड़ की मुहर (Rubber Stamp) की भाँति होती है और कार्यपालिका अर्थात् मंत्रिपरिषद् व्यावहारिक रूप से उसकी शक्तियों एवं अधिकारों का उपभोग कर देश का शासनतन्त्र चलाती है।

मंत्रिपरिषद् के निम्नलिखित कार्य हैं –

1. विधि-निर्माण सम्बन्धी कार्य – प्रत्येक सरकारी विधेयक संसद में किसी-न-किसी मंत्री द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है। ये विधेयक संसद द्वारा पारित होने पर ही कानून का रूप धारण करते हैं। क्योंकि संसद में मंत्रिपरिषद् का बहुमत होता है, इसलिए कोई भी विधेयक उस समय तक पारित नहीं होता है, जब तक उसे मंत्रिपरिषद् का समर्थन नहीं मिल जाता है। इस प्रकार विधि-निर्माण का समस्त कार्यक्रम मंत्रिपरिषद् ही निश्चित करती है।

2. नियुक्ति सम्बन्धी कार्य – राष्ट्रपति उच्चतम व उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, राज्यों के राज्यपालों, तीनों सेनाओं के सेनापतियों एवं महान्यायवादी एटर्नी जनरल), नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक आदि की देश के उच्च पदों पर नियुक्तियाँ, मंत्रिपरिषद् के परामर्श के अनुसार ही करता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से नियुक्तियाँ मंत्रिपरिषद् द्वारा ही होती हैं।

3. संसद की व्यवस्था – संसद में प्रस्तुत किए जाने वाले समस्त विषयों का निर्णय मंत्रिपरिषद् ही करती है। मंत्रिपरिषद् यह भी निर्णय करती है कि उस विषय को कितना समय दिया जाना चाहिए।

4. वित्त सम्बन्धी कार्य – देश की आर्थिक नीति निर्धारित करने का उत्तरदायित्व भी मंत्रिपरिषद् का ही होता है। अतः वार्षिक बजट तैयार करना, नए कर लगाना, करों की दर निश्चित करना एवं अनावश्यक करो को समाप्त करना आदि कार्य मंत्रिपरिषद् ही करती है।

5. नीति-निर्धारण का कार्य – सरकार की गृह एवं विदेश नीति का निर्धारण मंत्रिपरिषद् द्वारा ही होता है। मंत्रिपरिषद् का प्रत्येक मंत्री अपने विभाग से सम्बन्धित प्रशासन सम्बन्धी नियमों का निर्धारण स्वयं करता है; किन्तु नीति से सम्बन्धित सभी प्रश्न उसे मंत्रिमण्डल के समक्ष प्रस्तुत करने पड़ते हैं। इस सन्दर्भ में मंत्रिमण्डल का निर्णय अन्तिम माना जाता है।

6. राष्ट्रीय कार्यपालिका पर सर्वोच्च नियन्त्रण – सैद्धान्तिक दृष्टि से संघ सरकार की समस्त कार्यपालिका-शक्ति राष्ट्रपति में निहित है, परन्तु व्यवहार में इसका प्रयोग मंत्रिमण्डल द्वारा ही किया

जाता है। मंत्रिमण्डल ही आन्तरिक प्रशासन का संचालन करता है और देश की समस्त प्रशासनिक व्यवस्था पर नियन्त्रण रखता है।

7. राज्यों से सम्बन्धित अधिकार – मंत्रिपरिषद् को राज्यों से सम्बन्धित अधिकार प्राप्त होते हैं। वह राज्यों का निर्माण, वर्तमान राज्यों की सीमा में परिवर्तन एवं भाषा के आधार पर प्रान्तों का निर्माण कर सकती है।

प्रश्न 9.

संघीय लोक सेवा आयोग के गठन और कार्यों पर प्रकाश डालिए।

या

संघ लोक सेवा आयोग के कार्यों पर प्रकाश डालिए।

या

भारत में सार्वजनिक सेवाओं की कार्यप्रणाली का उल्लेख कीजिए।

या

संघ लोक सेवा आयोग के गठन और कार्यों को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर :

संविधान के अनुच्छेद 315 (1) के अनुसार, भारत में अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवाओं के पदाधिकारियों की नियुक्ति को व्यवस्थित करने तथा तद्विषयक नियुक्तियों के निमित्त प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं को संचालित करने हेतु संघ लोक सेवा आयोग की व्यवस्था की गयी है। सदस्यों की संख्या एवं नियुक्ति-संघ लोक सेवा आयोग, अखिल भारतीय सेवाओं तथा संघ लोक सेवाओं के सदस्यों की भर्ती, पदोन्नति एवं अनुशासन की कार्यवाही इत्यादि के सम्बन्ध में सरकार को परामर्श देता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 315 (1) से धारा 323 तक, संघ लोक सेवा आयोग के संगठन तथा कार्यों इत्यादि का विस्तृत वर्णन किया गया है। वर्तमान में संघीय लोक सेवा आयोग में 1 अध्यक्ष तथा 10 सदस्यों की व्यवस्था की गयी है। सदस्यों की संख्या राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर करती है तथा अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति ही करता है।

योग्यताएँ – किसी भी योग्य नागरिक को संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य नियुक्त किया जा सकता है। आयोग का सदस्य नियुक्त होने के लिए सामान्य योग्यताओं के अतिरिक्त निम्नलिखित योग्यताएँ होनी आवश्यक हैं –

1. वह 65 वर्ष से कम आयु का हो।
2. दिवालिया, पागल अथवा विवेकहीन न हो।
3. संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों में से कम-से-कम आधे सदस्य ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो कम-से-कम दस वर्ष तक भारत सरकार अथवा राज्य सरकार के अधीन किसी पद पर कार्य कर चुके हों।

सदस्यों की कार्यावधि – संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों की नियुक्ति 6 वर्ष के लिए होती है। लेकिन यदि कोई सदस्य इससे पूर्व ही 65 वर्ष की हो जाता है तो उसे अपना पद त्यागना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय के परामर्श पर राष्ट्रपति इन्हें पदच्युत भी कर सकता है।

पद-मुक्ति – संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यगण अपनी इच्छानुसार राष्ट्रपति को त्याग-पत्र देकर अपने पद से मुक्त भी हो सकते हैं। इसके साथ ही भारत का राष्ट्रपति निम्नलिखित परिस्थितियों में उन्हें अपदस्थ भी कर सकता है –

1. उन पर दुर्व्यवहार का आरोप लगाया जाए और वह उच्चतम न्यायालय में सत्य सिद्ध हो जाए।
2. यदि वे वेतन प्राप्त करने वाली अन्य कोई सेवा करने लगे।
3. यदि वे न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित कर दिये जाएँ।
4. यदि वे शारीरिक अथवा मानसिक रूप से कर्तव्य-पालन के अयोग्य सिद्ध हो जाएँ।

वेतन, भत्ते एवं सेवा-शर्तें-आयोग के सदस्यों के वेतन, भत्ते एवं सेवा-शर्तों को निर्धारित करने का अधिकार राष्ट्रपति को प्रदान किया गया है। किसी सदस्य के वेतन, भत्ते एवं सेवा-शर्तों को उसकी पदावधि में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

संघ लोक सेवा आयोग के कार्य

डॉ० मुतालिब ने आयोग के कार्यों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है –

(1) कार्यकारी

(2) नियामक तथा

(3) अर्द्धन्यायिक। परीक्षाओं के माध्यम से लोक महत्त्व के पदों पर प्रत्याशियों का चयन करना आयोग का कार्यकारी कर्तव्य है। भर्ती की पद्धतियों तथा नियुक्ति, पदोन्नति एवं विभिन्न सेवाओं में स्थानान्तरण आदि आयोग के नियामक प्रकृति के कार्य हैं। लोक सेवाओं से सम्बन्धित अनुशासन के मामलों पर सलाह देना आयोग का न्यायिक कार्य है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 320 के अनुसार लोक सेवा आयोग को निम्नांकित कार्य सौंपे गये हैं

1. परीक्षाओं का आयोजन – संघ लोक सेवा आयोग का प्रमुख कार्य अखिल भारतीय लोक सेवाओं के लिए योग्यतम व्यक्तियों का चयन करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह अनेक प्रतियोगी परीक्षाएँ आयोजित करता है। इन परीक्षाओं में जो अभ्यर्थी अपनी योग्यता से पर्याप्त अंक पाता है, उसका चयन कर लिया जाता है। इसके बाद इन व्यक्तियों को सरकारी पदों पर नियुक्ति करने के लिए यह आयोग सरकार से सिफारिश करता है। कुछ पदों के लिए आयोग द्वारा मौखिक परीक्षाओं की व्यवस्था भी की गयी है। मौखिक परीक्षाओं में सफल होने पर सफल अभ्यर्थियों को निर्धारित पदों पर नियुक्त कर दिया जाता है।

2. राष्ट्रपति को प्रतिवेदन – संघीय लोक सेवा आयोग को अपने कार्यों से सम्बन्धित एक वार्षिक रिपोर्ट (प्रतिवेदन) राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करनी पड़ती है। यदि सरकार इस आयोग द्वारा प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट की कोई सिफारिश नहीं मानती है तो राष्ट्रपति इसका कारण रिपोर्ट में लिख देता है और इसके उपरान्त संसद इस पर विचार करती है। इस रिपोर्ट का लाभ यह है कि इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि किन विभागों में इस आयोग ने स्वेच्छा से कितनी नियुक्तियाँ की हैं और सरकार ने कहाँ तक आयोग के कार्यों में हस्तक्षेप किया है।

3. संघ सरकार को परामर्श – संघ लोक सेवा आयोग अखिल भारतीय लोक सेवाओं के कर्मचारियों की नियुक्ति की विधि, पदोन्नति, स्थानान्तरण आदि के विषय में संघ सरकार को परामर्श देता है। यह सरकारी कर्मचारियों की किसी प्रकार की शारीरिक या मानसिक क्षति हो जाने पर संघ सरकार को उनकी क्षतिपूर्ति का परामर्श भी देता है और उससे सिफारिश भी करता है। यद्यपि सरकार आयोग के परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं है, किन्तु सामान्यतः आयोग की सिफारिशों तथा उसके परामर्श को स्वीकार कर ही लिया जाता है, क्योंकि आयोग के सदस्य बहुत कुशल और अनुभवी होते हैं।

4. विशेष सेवाओं की योजना सम्बन्धी सहायता – उस दशा में जब दो या दो से अधिक राज्य किन्हीं विशेष योग्यता वाली सेवाओं के लिए भर्ती की योजना बनाने या चलाने की प्रार्थना करें तो संघ लोक सेवा आयोग उन्हें ऐसा करने में सहायता करता है।